देवेंद्र चरित



अखिलप्रसाद

देवेन्द्र चरित

[सुप्रसिद्ध समाज-सेवक, पुस्तक-प्रकाशक और जैन-धर्म-प्रचारक स्वर्गीय कुमार देवेन्द्रप्रसाद जैन की जीवनी]

लेखक

अजितप्रसाद एम्० ए०, एल्-एल्० बी०

(ऐडवोकेट हाईकोर्ट, लाहौर)

प्रकाशक

अजितप्रसाद एम्० ए०, एल्-एल्० बी०

अजिताश्रम, लखनऊ

सं० १९८९

प्रथमावृत्ति १०००] [मूल्य दस आना

मुद्रक
श्रीदुलारेलाल भार्गव
अध्यक्ष गंगा-फ़ाइनआर्ट-प्रेस
लखनऊ



कुमार देवेंद्रप्रसाद जैन, आरा

मेरे प्यारे देवेन्द्र !

तुम्हारी संसार-यात्रा की यह संक्षिप्त
कहानी, तुम्हारे प्रेम-पूर्ण सत्संग
की यह पुण्य-स्मृति, मैंने
अपनी अयोग्यता और अंत-
राय कर्मजनित विघ्न-
बाधाओं के कारण
१० वर्ष में लिख
पाई है, मुझे
क्षमा करो

लाहौर
१. ५. ३१.

अजितप्रसाद
अजिताश्रम, लखनऊ

विषय-सूची

श्रद्धांजलि

श्रीयुत बाबू गुलाबराय M. A., LL. B.

प्राइवेट सेक्रेटरी महाराजा साहब छतरपुर द्वारा



नुष्य-जीवन में आकस्मिकता के लिये बहुत स्थान रहता है। इसी आकस्मिकता ने देवेंद्रजी से मेरा परिचय कराकर मुझे हिंदी का सेवक बना दिया। यद्यपि यह संभव था कि बिना देवेंद्र बाबू से साक्षात्कार हुए मैं लेखक बन जाता, तथापि वास्तविक बात यह है कि उनके द्वारा प्रकाशित की हुई मुद्रण-कला की आदर्श रूप पुस्तकों के प्रलोभन में एवं उनके निजी प्रोत्साहन ने मुझे ग्रंथ-लेखन के पथ में अग्रसर किया।

देवेंद्रजी से मेरा प्रथम साक्षात्कार वैश्य-बोर्डिंग-हाउस, आगरा में हुआ था। उससे पूर्व उनके एक पत्र द्वारा जो कि उन्होंने मेरे चम (Chum) श्रीयुत यमुनाप्रसादजी को (यह सज्जन आजकल मथुराजी में वकालत करते हैं) लिखा था,

मेरा चित्त उनकी ओर आकर्षित हो गया था। यद्यपि मैं उस कला का विशेषज्ञ नहीं हूँ, जिसके द्वारा लोग लेखन-शैली से मनुष्य का चरित्र जान लेते हैं, तथापि उस पत्र ने मुझे उनके प्रेम-पूर्ण हृदय, उनकी सहृदयता, कार्य-कुशलता तथा कर्तव्य-परायणता का परिचय दे दिया। जब वह यमुनाप्रसादजी के यहाँ आकर ठहरे, मैंने जो कुछ अनुमान किया था, अक्षरशः सत्य पाया। उनकी सौम्य मूर्ति में विश्व-प्रेम, आशा और उत्साह के पवित्र भावों की दीप्ति झलक रही थी। वह बहुश्रुत एवं अनुभवी थे, तथापि उनको वहाँ पर बड़ी दीनता और छात्र-भाव से वार्तालाप करते देखा। प्रसन्नता ने उनके चेहरे पर साम्राज्य-सा स्थापित कर लिया था। उन्होंने स्वप्रकाशित "सेवा-धर्म" दिखलाया; उसको देखते ही मुझे "शांति-धर्म" लिखने का विचार हुआ। मैंने उनसे "शांति-धर्म" लिखने का विचार पत्र द्वारा प्रकट किया था। पत्र का उत्तर ऐसा सानुरोध आया कि उसके आगे आलस्य, अयोग्यता-जन्य नैराश्य नहीं ठहर सकता था। पुस्तक लिखकर भेज दी; थोड़े ही दिनों में एकदम बिलकुल नई रीति की छपाई, नए डिजाइन के आवरण-पत्र से विभूषित, सुंदर सजीली पुस्तक मुझे मिल गई। मेरे घर के लोग, इष्ट-मित्र उसे देखकर आश्चर्यान्वित-से हो गए। उन दिनों इतनी पुस्तकमालाओं का

जन्म नहीं हुआ था। जो लोग मुझसे कुछ परिचय रखते हैं, वह यह जानते हैं कि मेरी सभी चीज़ों में अस्तव्यस्तता दिखाई पड़ती है, इस कारण मेरी पुस्तक मेरी नहीं मालूम होती थी। पुस्तक की समालोचना भी अच्छी निकली ; फिर क्या था, मुझमें भी उत्साह की बाढ़-सी आ गई ! उसी उत्साह की बाढ़ में "फिर निराशा क्यों ?" लिखी। वह भी देवेंद्रजी द्वारा प्रकाशित हुई।

देवेंद्रजी कार्य को स्थगित करना नहीं जानते थे। उनके हाथ में पुस्तक देकर बाट जोहने की आवश्यकता नहीं रहती थी। इसी कारण 'फिर निराशा क्यों ?' के एक ही दो मास पश्चात् 'मैत्री धर्म' भी प्रकाशित हो गया। 'नवरस' को विशेष सज-धज के साथ निकालना चाहते थे, किंतु खेद है कि उस ग्रंथ के विषय में जो उनको आशाएँ-अभिलाषाएँ थीं, वह उनके साथ ही चली गईं। मुझको प्रकाशक और भी मिले, किंतु किसी प्रकाशक ने मेरी पुस्तकों में इतना परिश्रम नहीं किया, जितना कि देवेंद्रजी ने किया था। प्रेस-कापी मुझे नहीं तैयार करनी पड़ती थी। वह स्वयं ही प्रेस-कापी तयार कर लेते और यदि मैं उसमें भी रदबदल कर उसको खराब कर डालता, तब भी वह एक और प्रेस-कापी तयार कराने को प्रस्तुत रहते। जब ऐसा प्रकाशक मिले, तब मूढ़ भी

लेखक बन सकता है। उनका यह सिद्धांत था कि पुस्तक की सफलता के हेतु विषय और भाषा की भाँति उसकी छपाई की उत्तमता परमावश्यक है। चित्त को पहली बार आकर्षण करने के निमित्त शरीर का सौंदर्य आवश्यक है, फिर तो उस व्यक्ति के गुण हृदय में स्थान जमा लेते हैं। यही हाल पुस्तक का है। यदि हिंदी में प्रकाशन-कला का इतिहास लिखा जाय, तो उनको बहुत ऊँचा स्थान मिलेगा। काशन-कार्य में वह हानि-लाभ का विचार नहीं रखते थे। ग्रंथ की उत्तम छपाई ही उनका मुख्य ध्येय था।

प्रकाशन उनका व्यवसाय न था, बरन् व्यसन था। जब आप एफ़्० ए० की परीक्षा देने जाते, तो अन्य विद्यार्थियों की भाँति पाठ्य-ग्रंथों का बस्ता बाँधकर नहीं ले जाते थे, न वह इस खोज-बीन में रहते थे कि आज क्या पर्चे में आवेगा। वह अपने साथ अपनी प्रकाशित पुस्तकों के प्रूफ़ ले जाते थे, जिनका कि वे परीक्षा की घंटी बजने तक संशोधन करते रहते थे। उन्होंने हिंदी-पुस्तकों के प्रकाशन ही में सफलता नहीं दिखाई थी, बरन् अँगरेज़ी-पुस्तकों के प्रकाशन में भी हिंदी-पुस्तकों के समान ही सफलता प्राप्त की।

उनकी क्रिया के क्षेत्र संकुचित न थे। वह "सेवा-धर्म" के केवल प्रकाशक ही नहीं, किंतु उसके सच्चे अनुयायी थे।

ज़रा-सी बात पर उनका हृदय द्रवित हो जाता था; और उत्साह उनमें इतना था कि वह अपने परिश्रम के बल पर्वत को भी हटा देने का साहस कर सकते थे। वह केवल साहस ही नहीं करते थे, जिस कार्य में लग जाते उसमें न शारीरिक स्वास्थ्य की परवा करते, न आर्थिक लाभ या हानि की। परवा तो इसी बात की रहती थी कि उनका ध्येय किसी-न-किसी प्रकार पूर्ण हो जाय।

पूर्ण रूप से वह धार्मिक थे, किंतु उनके धर्म ने उनके विचारों को संकुचित नहीं बनाया था। वह प्रत्येक धर्म के मनुष्यों से भ्रातृ-भाव से मिल सकते थे। घृणा एवं द्वेष की उनमें गंध तक न थी, इसीलिये वह समाज में सर्व-प्रिय बन सके। भारतवर्ष में थोड़े ही ऐसे विद्वान होंगे, जिनका कि उनसे निजी परिचय न हो। विदेश के भी बहुत-से विद्वानों से उनका परिचय एवं पत्र-व्यवहार था। जैन-धर्म के साहित्य को जितनी अँगरेज़ी भाषा-भाषियों से परिचय कराने में देवेंद्रजी ने सहायता दी है, उतनी थोड़े ही लोगों ने दी होगी। यदि वे जीवित रहते, तो देश-देशांतरों में अपने धर्म का गौरव स्थापन करने में बहुत कुछ योग देते।

काल की गति बहुत कुटिल है और कर्मों का विपाक एक दुर्भेद्य रहस्य है। ज्ञात नहीं कि ऐसे समाज-सेवक को

संसार से इतने शीघ्र क्यों उठा लिया गया। जो महाशय उनसे उपकृत हुए हैं, उनका परम धर्म है कि उनकी स्मृति को जीवित रखने का उद्योग करें। यद्यपि किसी महान् व्यक्ति के व्यक्तित्व का शब्दों द्वारा वर्णन करना प्रायः दुस्साध्य कार्य है, तथापि ऐसे गुणग्राही समाज-सेवक सज्जन के प्रति मूक रहना कृतघ्नता है; इस भाव से थोड़ी-सी पंक्तियों में अपनी सेवांजलि-स्वरूप उनकी पुण्य-स्मृति को भेंट कर रहा हूँ। आशा है, इस प्रेम की भेंट को प्रेम-पुजारी की आत्मा स्वीकार करेगी।



देवेन्द्र चरित

देवेन्द्र-जन्म

Dear Devendra, Lead a life of fearless truth, faultless character and boundless love.

Devendra Diary

देवेंद्र प्यारे, तुम्हारी जीवन-यात्रा निर्भय, सत्य और निर्दोष, आचार-युक्त और अपरिमित प्रेममय हो।

देवेंद्र-डायरी,

जैन-धर्म के इतिहास में भारतवर्ष का बिहार-प्रांत अत्यंत महत्त्व-पूर्ण और परम पवित्र स्थान है। प्राचीन काल में इसी को मिथिला या विदेह कहते थे। मिथिलेश-कुमारी साध्वी सीता ने इसी पुनीत स्थान पर जन्म लिया था। मुनि-संघ के विहार और त्रिभुवन-तिलक तीर्थंकरों के समवशरण प्रसार से यह समस्त भूमंडल तपोवन और परम पूज्य स्थान रहा है।

सर्वोत्कृष्ट तीर्थराज श्रीसम्मेदाचल (सम्मदे शिखर वा पारसनाथ पहाड़) इसी प्रांत को गौरवान्वित करता है। राजगृह-नगर में, जहाँ जरासंध ने राज्य किया था, श्रीमुनि सुव्रतनाथ तीर्थंकर के गर्भ, जन्म, तप, ज्ञान, कल्याणक के वंदनीय स्थान हैं, और उसके इर्द-गिर्द की पाँच पहाड़ियाँ, विपुलाचल, उदयगिरि, स्वर्णगिरि, रत्नगिरि और वैभारगिरि श्रीमहावीर स्वामी के समवसरण से पवित्रित और लाखों साधुओं की तपोभूमि होने के कारण पूज्य हैं। बारहवें तीर्थंकर श्रीवासपूज्य स्वामी का मोक्ष मंदारगिरि और चरम तीर्थंकर श्रीमहावीर भगवान् का निर्वाण-क्षेत्र श्रीपावापुरी भी बिहार ही में हैं। पावापुरी के निकट ही श्रीवर्द्धमान स्वामी का शुभ जन्म-स्थान कुंडलपुर है; और उसके पास ही नालंद के प्राचीन और जगत् विख्यात विश्वविद्यालय के खँडहर अब भी उसका माहात्म्य प्रकट कर रहे हैं।

मगध भी इसी प्रांत के अंतर्गत था। मगध का मुख्य नगर पटना, जो पहले पाटलिपुत्र के नाम से विख्यात और अशोक सम्राट् की राजधानी था, अब आधुनिक बिहार-प्रांत का मुख्य नगर है, और गंगाजी के किनारे सात मील लंबा बसा हुआ है। गुरु गोविंदसिंहजी का जन्म-स्थान होने के कारण यह सिक्खों का तीर्थ-स्थान है। जैन-पुराण के विख्यात सेठ

सुदर्शनजी का स्मारक, जैनियों का यात्रा-क्षेत्र और पूज्य भूमि है। इस प्रांत में विहार नाम की एक नगरी भी है, जो श्रीपावापुरीजी से ७ मील है, और जिसका आदर मुसलमान-जनता उसको 'विहार शरीफ़' कहकर करती है।

पटना के पास ही आरा नाम का नगर है। शिला-लेखों से विदित होता है कि इसका प्राचीन नाम आराम नगर था। बिगड़ते-बिगड़ते अब आरा रह गया। आरा को यदि जैनपुरी कहा जाय, तो अत्युक्ति न होगी। इसके इर्द-गिर्द जैनियों की बड़ी-बड़ी जमींदारी हैं, और यहाँ घर-घर में जैन-मंदिर विद्यमान हैं। श्रीशांतिनाथजी का विशाल शिखर-बद्ध मंदिर राजमार्ग पर है। मूलनायक भगवान् का प्रतिबिंब मकराने के श्वेत पाषाण का अत्यंत मनोज्ञ है। यह मंदिर स्वर्गीया श्रीमती श्रेयांस कुँवरजी का बनवाया हुआ है। इसके आगे के बरामदे में श्याम-श्वेत पाषाण का मनोरंजक फ़र्श श्री० बाबू निर्मलकुमारजी ने १९२८ में बनवाया है। लंबा, चौड़ा, पक्का चौक सभा-पंचायत के योग्य अपने ढंग का निराला है, और इस मंदिर की उपयोगिता बढ़ाने और इसको सुदृढ़ तथा सुशोभित करने में श्रीयुत बाबू निर्मलकुमारजी निरंतर योग देते रहते हैं।

इसी मंदिर से मिला हुआ श्रीजैनसिद्धांत भवन है, जिसकी

कीर्ति जैन-संसार में दिगंत तक व्याप्त है । इस भवन की चित्ताकर्षक बनावट, सजावट और इसका सुसज्जित दृश्य राह चलते को रोक लेता है, और अंदर जाते ही वह रचना दृष्टिगोचर होती है, जो जैनागम प्रेमी को भारतवर्ष में अन्य किसी स्थान पर नहीं मिल सकती । संस्कृत, प्राकृत, तामिल, कनाड़ी, मराठी, बँगला, गुजराती, हिंदी, अँगरेज़ी आदि भाषाओं में ताड़ पत्रादि पर लिखित, मुद्रित ग्रंथ ताम्रपत्र और अन्य साहित्यिक प्राचीन वस्तु सुंदर अलमारियों में सुसज्जित हैं, और इसके प्रबंधक श्रीयुत पं० भुजबली शास्त्री तुरंत ही जो ग्रंथ माँगो, निकालकर उपस्थित कर देते हैं, और प्रेम से जैन-धर्म-संबंधी महत्त्व-पूर्ण वस्तुओं का दर्शन कराते हैं ।

श्रीसम्मेद शिखर, पावापुरी आदि के प्रतिबिंब रूप भी कई जिन-मंदिर हैं ।

इसी आरा-नगर में संवत् १९४५, रविवार, आश्विन शुक्ल २, ऑक्टोबर २७ सन् १८८८ के दिन हमारे चरित-नायक का जन्म हुआ ।

देवेन्द्र चरित

२.

शैशवकाल, बाल्यावस्था, विद्योपार्जन

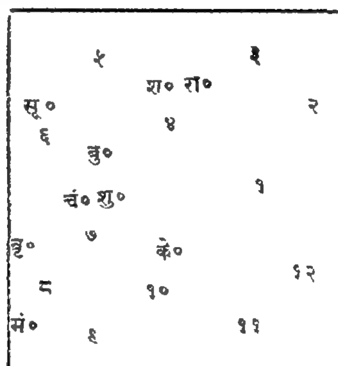
Babu Deva Kumar of Arrah is to be my ideal in life, and my attempt should be to strive to do what he, owing to his premature death, could not accomplish. My desire to serve is so intense and firmly rooted that I must either work or cease to be at all.

Devendra Diary

आरा के बाबू देवकुमार मेरे जीवन के लक्ष्य हैं; मेरा प्रयत्न सदैव यही रहेगा कि जो वह अपने असामयिक मृत्यु के कारण न कर सके, उसे पूरा कर दूँ। सेवा की अभिलाषा मुझमें इतनी दृढ़ और गहरी जमी हुई है कि मैं या तो कुछ कर दिखाऊँगा या मेरा अन्त ही हो जायगा।

देवेन्द्र-डायरी

देवेन्द्र के जन्म-समय नवग्रह की स्थिति इस प्रकार थी—इष्ट-समय ४५ । ४९ था।



ज्योतिष-शास्त्र के अनुसार इस ग्रह-स्थिति का प्रभाव जो कुछ भी हो, परन्तु हम निस्संकोच यह कह सकते हैं कि रविवार, फाल्गुन शुक्ल १० संवत १९७७, मुताबिक १७ एप्रिल सन् १९२१ तक अपने ३१ वर्ष के जीवन में, विश्व-प्रेम से पूर्ण इस महान आत्मा ने जो विश्व-सेवा की, और विशेषतया जैन-संसार के हितार्थ और जैनागम के प्रचारार्थ जो अथक परिश्रम किया, वह जैन-समाज के इतिहास में अत्यंत विशाल और उपमा-रहित है।

क्षत्रिय-कुलोत्पन्न, राजा अग्र के वंशज, वांसलगोत्रीय, श्रीयुत

सुपार्श्वदासजी आरा के उच्च कोटि के सद्गृहस्थ थे। विद्याध्ययन के लिये पटना में छात्र-जीवन व्यतीत करते थे। एक दिन पूर्ण यौवनावस्था में गंगा-स्नान करते हुए वह एकाकी जल-समाधिस्थ हो गए। इधर तो श्रीयुत सुपार्श्वदासजी का शरीर गंगा-गर्भ में समाया, और उधर उनके हाईकोर्ट की वकालत-परीक्षा में उत्तीर्ण होने का समाचार आया। जो खबर हर्ष को विस्तार करती, वही दुख को बढ़ानेवाली हो गई। पतिदेव के आकस्मिक वियोग से संसार-भोगों से उदासीन होकर देवेंद्र की माताजी वैधव्य दीक्षा लेकर अपने भाई श्रीयुत नन्हूलालजी के घर आरा-नगर में रहने लगीं। उस समय देवेंद्र को जन्म लिए हुए केवल दो महीने हुए थे। पुत्र की मूर्ति में पतिदेव का प्रतिबिंब देखती हुई देवेंद्र की माता का सारा संसार पुत्र-प्रेम और धर्मानुराग में संकचित था। रसायन की तरह संकुचित प्रेम का आवेग माता के दूध द्वारा देवेंद्र की नस-नस में सा प्रसारित हुआ कि उसका जीवन विश्व-प्रेम और धर्मानुराग-रूप हो गया।

शैशव अवस्था और बालकपन से ही प्रेम-रस ने अपना प्रभाव देवेंद्र के स्वच्छ हृदय-पट पर जमा लिया। घर के और आस-पास के बालकों से खेल-क्रीड़ा में वह द्वेष और ईर्षा-भाव न करके सदा प्रेम से व्यवहार करते थे। स्कूल में सह-

पाठियों की सहायता करना, अध्यापकों की विनय, बड़ों से नम्र-भाव, देवेंद्र का स्वभाव था। यह सबके प्यारे, और सब इनके प्यारे थे।

देवेंद्र के बालकपन में आरा-नगर के वायुमंडल और समाज पर उस महान् व्यक्ति का प्रभाव पड़ रहा था, जिस जैन-समाजोद्धार और जैन-धर्म-प्रचार के अर्थ जन्म धारण किया था। सन १९०० में श्रीयुत बाबू देवकुमारजी ने अँगरेजी जैन-गजट का संपादन आरा से करना प्रारंभ किया, और १९०३ तक यह पत्र, जिसने जैन-जाति की उन्नति की नींव डाली, और उसको उत्कर्ष का मार्ग दिखलाया, बराबर उनके संपादकत्व में निकलता रहा। १९०५ में उन्होंने श्रीस्याद्वाद महाविद्यालय, काशी की स्थापना में अग्र भाग लिया; और स्थापना के पहले दिन से स्वदेहोत्सर्ग तक वह उसके संस्थापक मंत्री रहे।

१९०६ में उन्होंने दक्षिण-प्रांत के तीर्थ-क्षेत्रों की यात्रा की, और १९०७ में कुंडलपुर अधिवेशन पर भारतवर्षीय दिगंबर जैन-महासभा के सभापति हुए। यह महासभा ३०-३५ वर्ष से स्थापित है, और बड़े-बड़े महानुभाव इसके सभापति के आसन को सुशोभित कर चुके हैं। किंतु यह कहे विना नहीं रहा जाता कि अब तक ऐसा विद्वत्ता-पूर्ण, ऐसा भारी भावों

से भरा हुआ, ऐसा उत्साह-वर्द्धक और ऐसा पथ-प्रदर्शक व्याख्यान महासभा के मंच से नहीं दिया गया।

स्वर्गीय श्रीदेवकुमारजी ने अपने व्याख्यान में कहा था— 'अनुकरणशीलता आजकल जैन-समाज को एक असाध्य बीमारी हो गई है'......'आज ११ वर्ष से प्रतिवर्ष अमित धन-व्यय करके प्रशंसनीय अभिप्राय से प्रयास करते हुए रहने पर भी हम लोग यथेष्ट सफल मनोरथ नहीं हुए'......'कारण इसका यह है कि देश, काल, पात्र ज्ञान-पूर्वक समाज को गठन, उत्पत्ति, गति, नीति व परिणाम निरीक्षण- पूर्वक कोई काम यहाँ नहीं किया जाता है'...'हममें विचार-शक्ति ही नहीं रही'......'अपने लिये मत ठीक करना, सोच-विचारकर कुछ बोलना-करना हमको अब आता ही नहीं'......'आप लोग विचारें कि इस देश के अलावा संसार में लोग समाज-संस्कार किस तरह से करते हैं'......'अभी कुछ नहीं हुआ है, एक दिन आवेगा, जिस दिन मेरी सन्तान, जब उनकी आँखें खुलेंगी, हमको कर्तव्य-पालन-विमुख समझकर मेरे नाम को रोवेंगी'......'आज हम लोग सुधार के लिये एकत्रित हुए हैं, व्याकरण व अभिधान के अनुसार सुधार के चाहे जो अर्थ हों, किंतु बात साफ़ यह है कि जिससे हमारी बिगड़ी दशा बन जाय, उसी को सुधार चाहे संस्कार कहते हैं...'

'आज हमसे स्वार्थपरता गई नहीं।'...'हमारी दृष्टि चहार-दीवारी के बाहर भी कभी गई नहीं।'...'सुधार अवश्य हम लोगों का अभीष्ट है।'...'हम का अर्थ यदि यहाँ समाज हो, तो एक व्यक्ति का भी परित्याग विधेय नहीं है।'...'जब मेरा ही सुधार होना है, तो मैं संपूर्ण अंश में सुधरूँ या कियदंश में।'...'पादरी होब्स Hobbs कहता है—If India could heal and cleanse and uplift and educate to equalize men and women in all the worlds' common affairs, that would indeed help to gain nationality, a nationality that would mean both solidarity and salvation. अर्थात् यदि हम लोग अपने स्त्री-पुरुष, दीन-दुखी, सब लोगों का उद्धार कर सकें, उन्हें शिक्षित, दीक्षित व शुद्ध कर सकें, जगत् के सब सामान्य कार्यों के लायक़ उन्हें बना सकें, तो कुछ हो सकता है, अन्यथा नहीं।'...'यही समाज को ठोस व चिरस्थायी करने का उपाय है।' ''यह बात नई नहीं है, दयार्द्र तीर्थंकर महाप्रभु सार्वभौम उद्धार के लिये इसी के उपदेष्टा हुए।'...'विधवाओं और अनाथ पितृ-मातृ-हीन बालकों के दुःख दूर करो, बच्चों की शीक्षा और युवकों के चरित्र का सुधार करो, वयस्क महापुरुषों के धन की रक्षा करो, उनको धर्म-विमुख न होने दो, अन्त समय के लिये

चेष्टा करो, मुक्ति हो, निर्वाण हो'...'स्वतन्त्र विचारवालों की कमी हो गई है'...'सैकड़े में निन्नानवे अनुकरणशील होने के कारण द्वेषभावप्रचारक हो गए हैं'...'हम सशंकित घर में बैठे हैं, एक पद भी बाहर बढ़ नहीं रहे हैं'...'हम अपने रोग की आप कोई खबर नहीं रखते'...'सुधार की जवाबदेही प्रधान पुरुष पर बहुत है'...'समाज-सुधार के लिये हम लोग उदार-भाव-सम्पन्न हों, यही दरकार है'...'जगत् बिना धर्म के चल नहीं सका है, यदि धर्म संस्थापन करना है, तो अवश्य रीति ही नहीं, बल्कि वहम, खौफ़, रसम-रसूमात सर्व त्याग देने होंगे, यही समाज के ठोस और चिरायु करने का उपाय है'...'समाज-सुधार, बिना ऐक्यता के हो नहीं सकता'...'यह प्रथम आवश्यकता है कि शक्ति के समूह का एक केन्द्रस्थित संयोग कर दिया जाय'...'अब एक विलक्षय सहोयोग की आवश्यकता है'...'वास्तव में एक बड़ा दुःखकर विघ्न है कि लोग भिन्न मतावलंबी होकर आपस में एक दूसरे के अपकार के लिये कटिबद्ध हो जाते हैं'...'जिसने कुछ भी अपनी जाति के लिये कार्य किया है, वह सराहनीय है'

जो उपदेश १९०७ में जैन-समाज की पतित अवस्था से दयार्द्र-चित्त स्वर्गीय श्रीयुत देवकुमारजी ने दिया था, वह निष्फल गया। जैन-समाज जब से भी अधिक पतित, निस्सत्व

और निकम्मा हो गया—यह जैन-जाति का दुर्भाग्य था कि वह स्वर्ग का देव, देवकुमार रूपी मनुष्य-देह में अधिक समय तक न रह सका, और ४ अगस्त १९०८ को धर्म-ध्यान में उपयोग लगाए, समाधि मरण करके स्वर्गलोक में पधार गया।

देवेन्द्र पर इस कर्मयोगी के आचार-विचार का जो प्रभाव पड़ा, उसकी झलक उन पंक्तियों में है, जो देवेन्द्र ने २२ जनवरी १९११ को अपनी डायरी में लिखी हैं, और जो इस अध्याय के प्रारम्भ में शीर्षक रूप दी गई हैं।

इसके अतिरिक्त दूसरा निमित्त कारण जिसने देवेन्द्र के आचार-विचार पर प्रभाव डाला, श्रीयुत बाबू जैनेन्द्रकिशोर का सत्संग था—यह भी आरा-समाज के एक चमकते हुए सितारे थे, लेकिन टूटनेवाले सितारे की तरह एक जगमगाहट दिखलाकर ३८ बरस की उमर में शान्त हो गए। जैन-जाति के दुर्भाग्य को हम कहाँ तक रोवें। "बारह भावना" का स्वरूप यों तो बहुतों ने लिखा है, किन्तु जिस प्रकार इस विषय को श्रीयुत स्वर्गीय जैनेन्द्रकिशोर ने दर्शाया है, वह अपूर्व, अनुपम और दूसरे को अगम्य है। जैनधार्मिक नाटक और अन्य नाटक, उपन्यास और प्रहसन भी इन्होंने अनेकों लिखे हैं, आरा-नागरीप्रचारिणी सभा के स्थापित करने का

श्रेय भी इन्हीं को प्राप्त था, सार्वजनिक और सामाजिक कार्यों में तन-मन-धन से अग्र भाग लेते थे।

देवेन्द्र को जब स्कूल के काम से अवकाश मिलता, तो वह बाबू जैनेन्द्रकिशोर के पास रहते, उनके लेखों को छपने के वास्ते सुंदर रूप में लिखते, और उनकी शिक्षा-पूर्ण और साहित्य-रस से छलकती हुई बातों का स्वाद लेते थे।

१९०५ में जैन-ऐसोसिएशन का बंगाल-प्रांतीय अधिवेशन, श्रीयुत जगमंदरलाल जैनी के सभापतित्व में, आरा में, हुआ। बाबू जैनेन्द्रकिशोर बंगाल-प्रांतीय मंत्री थे। उस अधिवेशन में देवेन्द्र ने "स्वदेश-प्रेम और अहिंसा" पर मार्मिक और विचारोत्तेजक व्याख्यान दिया था। इस अवसर पर देवेन्द्र के स्वच्छ हृदय की श्रीयुत जगमंदरलालजी की अद्वितीय आकर्षण-शक्ति ने खींच लिया, और उन्होंने भी जैन-समाज के उगते हुए सितारे को पहचान लिया।

१९०८ में देवेन्द्र स्कूल की शिक्षा पूर्ण करके बनारस गए, और जुलाई में सेंट्रल हिंदू-कॉलिज में भरती हो गए।

कुछ दिन पीछे इनकी संरक्षता में इनके मामा बाबू नंदूलालजी के पुत्र पवनंजयकुमारजी, बाबू किरोड़ीचंदजी के पुत्र अनमोलचंदजी, बाबू गुलाबचंदजी के पुत्र सुखेन्द्र, मुखेन्द्र और वीरेन्द्र भी इनके साथ रहकर विद्या अध्ययन करने लगे।

१९०९ में थियोसोफिकल सोसायटी और सेंट्रल हिंदू-कॉलेज बनारस के वार्षिकोत्सव में मुझे व्याख्यान देने का अवसर हुआ। मेरा व्याख्यान जैन-धर्म पर नहीं था, किंतु प्यारे देवेन्द्र ने जैनत्व के नाते से मुझे तुरंत पहचान लिया, व्याख्यान के पश्चात् मुझे अपने साथ अपनी प्रेम-कुटी में ले गए, और मुझे अपने और अपने प्रेम-कुटी के सहवासियों के साथ ही भोजन कराया। मैंने इससे पहले विद्यार्थीगृह किसी छात्रालय में ऐसा सादगी से सुसज्जित और चित्ताकर्षक नहीं देखा था। शिक्षाप्रद सुलिखित कार्ड-बोर्ड उचित स्थानों पर लगे थे, और जो वस्तु थी, ठीक स्थान पर, साफ़-सुथरे ढंग से, स्थापित थी।

फिर यह परिचय दिन-दिन बढ़ते-बढ़ते पारस्परिक प्रेम के रूप में परिवर्तित हो गया।



देवेन्द्र चरित

३.

देवेन्द्र और स्याद्वाद-विद्यालय



स्वर्गीय महात्मा देवकुमारजी का अंतिम आदेश

'आप सब भाइयों और विशेषतया जैन-समाज के नेताओं से मेरी अंतिम प्रार्थना यही है कि प्राचीन शास्त्रों, मंदिरों और शिला-लेखों की शीघ्रतर रक्षा होनी चाहिए, क्योंकि संसार में इन्हीं से जैन-धर्म के महत्त्व का अस्तित्व रहेगा। मैं तो इसी चिंता में था, किंतु अचानक काल आकर मुझे लिए जा रहा है। मैंने यह प्रतिज्ञा की थी कि जब तक इस कार्य को पूरा न कर दूँगा, तब तक ब्रह्मचर्य का पालन करूँगा। बड़े शोक की बात है कि अपने दुर्भाग्योदय से मुझे इस परम पवित्र कार्य करने का पुण्य प्राप्त नहीं हुआ। अब आप ही लोग इस पवित्र कार्य के स्तंभ-रूप हैं, इसलिये इस

परमावश्यक कार्य का संपादन करना आप सबका परम कर्तव्य है।'

जन्म चैत्र सं० १९३३। देहांत श्रावण सं० १९६४।

हम ऊपर लिख चुके हैं कि श्रीयुत बाबू देवकुमारजी की महान् आत्मा का देवेन्द्र के हृदय पर गहरा प्रभाव पड़ा। जिस काम को श्री० बा० देवकुमारजी पूरा न कर सके, उसको संपूर्ण संपन्न करना देवेन्द्र ने अपना ध्येय और कर्तव्य बनाया, और उसके लिये यथाशक्ति यथेष्ट और अथक परिश्रम करते रहे।

जैन-सिद्धांत के मर्मज्ञ, अनुरागी, कषाय-हीन, अलोभी और परोपकारी समाज-सेवक तैयार करने के उद्देश्य से श्री० बा० देवकुमारजी ने श्री० स्याद्वाद-महाविद्यालय की स्थापना १२ एप्रिल १९०५ को जैन-धर्म-भूषण ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजी, बाबा भागीरथजी वर्णी और बाल ब्रह्मचारी पं० पन्नालाल आदि महानुभावों की उपस्थिति में दानवीर जैन-कुलभूषण श्रीमान् सेठ माणिकचंदजी जस्टिस-आव-दी पीस द्वारा कराई। प्रथम विद्यार्थी श्री० गणेशप्रसादजी ने जो अब न्यायाचार्य-पद से विभूषित जैन-धर्म के एक दिग्गज विद्वान् हैं, प्रारंभ मुहूर्त के समय श्रीप्रमेयकमलमार्तंड से पाठ पढ़ा था। २५ वर्ष हो चुके, किंतु खेद है कि श्रीगणेशप्रसादजी जैसा कोई भी दूसरा विद्यार्थी इस संस्था से तैयार होकर नहीं निकला।

इस संस्था के, जिसको हम आगे केवल स्याद्वाद-नाम से उल्लिखित करेंगे, प्रथम मंत्री इसके संस्थापक और संरक्षक श्री० बा० देवकुमारजी ही नियत हुए; और उनके स्वर्गारोहण पर यह उत्तरदायित्व-पूर्ण पद सुविख्यात जैन-कवि, गद्य-लेखक और जैन-जाति के निस्स्वार्थ सेवक श्रीयुत जैनेंद्रकिशोरजी आरा-निवासी को सौंपा गया।

श्रीजैनेंद्रकिशोरजी १९०८-९ में विषम रोग से पीड़ित रहे; किंतु जब से उनके परम भक्त श्रद्धालु शिष्य देवेंद्र बनारस हिंदू युनिवर्सिटी-कॉलेज में प्रविष्ट हुए, तब से वे अपना समय अधिकतर स्याद्वाद की सेवा में ही लगाने लगे। रात-दिन वह स्याद्वाद के ही प्रबंध में दत्तचित्त रहते थे, जैन-धर्म की उपासना और जैन-जाति की सेवा को उन्होंने अपना जीवनोद्देश्य बना रक्खा था; स्याद्वाद की सेवा भी उस विशाल उद्देश्य में गर्भित थी। देवेंद्र विद्याध्ययन जैसे परम कर्तव्य को भी स्वार्थ समझकर स्याद्वाद की सेवा के सामने गौण कर देते थे। अनेक अवसरों पर स्याद्वाद के कार्य से अवकाश न मिलने के कारण कॉलेज में उनकी अनुपस्थिति हो जाया करती थी।

स्याद्वाद का प्रबंध कितना दुस्तर और दुस्साध्य था, यह श्री० जैनेंद्रकिशोरजी के एक पत्र नं० ७५७ से विदित होता

है, जो उन्होंने देवेन्द्र के नाम २० फ़रवरी ९ को बाँकीपुर से, जहाँ वह इलाज कराने गए थे, लिखा था—

"........Of course, the work of the Institu-"tion is not methodical. It may be remedied "if you try in your own way. Please send "me a plan by which the institution may pro-"ceed systematically. I shall sanction it after "perusal and necessary modifications......You "know that the boys of the Patshala have been "obstinate, wicked and quarrelsome for a long "time. They often raise their head against "Patshala Staff in combination. All the pre-"vious superintendents have suffered, and been "removed for their sake. They always try to "live and work independently. I am dead "against such combinations by boys in their "scholastic career." अर्थात्—

"इस संस्था का काम बेशक नियम रूप से नहीं होता है। यदि तुम अपने ढंग पर कार्य करोगे, तो सब ठीक हो जायगा। मुझे एक कार्य-क्रम लिखकर भेज दो, जिससे इस संस्था का काम सुचारु रीति से चल सके। मैं उसको पढ़कर, और उसमें आवश्यकीय सुधार करके अपनी स्वीकारिता भेज दूँगा। तुम जानते हो कि पाठशाला के लड़के हठी, कुत्सित विचारवाले

और झगड़ालू दीर्घकाल से हो रहे हैं। वह अक्सर पाठशाला के कार्यकर्ताओं के मुक़ाबले में सिर उठाया करते हैं। पहले के सुपरिंटेंडेंट इन्हीं के कारण दुखी होकर अलग हो गए। यह सदैव निरंकुशतया रहने और काम करने का प्रयत्न किया करते हैं। विद्यार्थी अवस्था में लड़कों के इस प्रकार जत्था बनाने से मुझको कड़ा विरोध रहा है।"

यह सब कुछ होते हुए भी उन्होंने लिखा था—

"Of course, I feel my responsibility even on "my sick bed, but what can I do."

"निस्संदेह मैं अपने उत्तरदायित्व का अनुभव रोग-शय्या पर भी कर रहा हूँ, किंतु मैं क्या करूँ।"

१५ मई, १९०९ को श्री० जैनेंद्रकिशोर का स्वर्गारोहण हुआ, और स्वर्गीय सेठ माणिकचंदजी के आग्रह से स्याद्वाद का मंत्रित्व पद देवेन्द्र को अपनी विद्यार्थी अवस्था में ही स्वीकार करना पड़ा।

देवेन्द्र के अथक परिश्रम करने पर भी इस संस्था की परिस्थिति कैसी विकट रही, इसका कुछ अनुमान उस पत्र से हो सकता है, जो २४ मार्च १९११ को श्रीजैन-सिद्धांत-भवन, के संस्थापक मंत्री और श्रीस्याद्वाद-महाविद्यालय के संस्थापक-सदस्य स्वर्गीय श्रीयुत किरोड़ीचंदजी ने आरा से देवेन्द्र को इस भाँति लिखा था—

"......सब हालात श्रीमान् नेमीसागरजी से भी मालूम हुए......पाठशाला के विद्यार्थियों के भी हालात मालूम हुए ......यदि हम लोग ऐसे मूर्ख बालकों से डर जायँगे, तो कदापि समाज का सुधार नहीं हो सकता......हमारे तीर्थंकरों पर भी लोगों ने बहुत उपसर्ग किया......हम लोगों को सब काम शांतचित्त से, पूरे तौर से समझ-बूझकर धर्म्मोन्नति और जात्युन्नति का करना चाहिए; यदि हम कोई काम मान, बड़ाई, कीना, बुग्ज़ रखकर करेंगे, तो अवश्य दुर्गति के पात्र होंगे; और यदि शुद्ध अंतःकरण से समाज के कल्याण के वास्ते अपना कर्तव्य समझकर नियम का पालन करते संते, यदि दुष्ट लोग अपकीर्ति करेंगे, तो उसका फल वही भोगेंगे......। इस पाठशाला के प्रारम्भ ही से लड़ाई-झगड़े की उत्पत्ति है। यदि यह कहा जाय कि लड़ाई-झगड़े ही से इस पाठशाला की उत्पत्ति है, तो भी सत्य है। यदि हम लोग अपकीर्ति से डरकर छोड़ देते, तो आज पाठशाला का काशी में नाम-निशान भी बाक़ी न रहता, परंतु नहीं, हम लोग हमेशा अपना धर्म समझकर गिरी हुई जैन-जाति को सुधारने के ख़याल से अपने काम में मुस्तैद रहे......। इन्हीं बातों की आशा है, आप लोग भी करेंगे। इस साल महासभा में भी ज़रूर महा-विद्यालय के पृथक् करने की कोशिश होगी; यदि ऐसा हुआ, तो

हम लोगों का सफल मनोरथ होगा, क्योंकि जिस काम में बहु-सम्पत्ति व मान-बड़ाईवाले लोग होते हैं, उस संस्था की यही दशा होती है और इसी वजह से हम पाठशाला के विद्यालय में मिलाने के बिल्कुल विरुद्ध थे, परंतु सेठ (माणिक-चंद) जी व शीतलप्रसाद ने जोर देकर यह काम कराया। खैर, गुजरी बातों का खयाल नहीं करना, आप पूरे तौर से मुस्तैदी के साथ नियमों का पालन करना, और जो विद्यार्थी आज्ञा-भंग करे, उसको समझाना, यदि वह न माने, तो उसको उचित दंड देना—आप कदापि समाज का भय न करना। विद्यालय के अलग ही होने में खैरियत है। हम लोगों को इसमें कुछ कहने की जरूरत नहीं है; वह लोग अपने ही मान-बड़ाई के वास्ते, जहाँ चाहें ले जावें, क्योंकि हम पहले ही से खूब समझे हुए हैं कि विद्यालय के पेट में ४०००० तोले वजन का बायगोला है, वह जब तक नष्ट नहीं होगा, तब तक इस विद्यालय को इस भारत-भूमि में कदापि स्थिरता व शान्ति नहीं होगी......आप लोग कदापि किसी का भय न करना, हमेशा आनंद चित्त से अपने कर्तव्य का पालन करना, चाहे कोई खुश हो, या नाखुश। हम लोग किसी के नौकर नहीं, धर्म का पैसा खाना नहीं, फिर किसका डर है। हम लोग केवल धर्म समझकर इस कार्य को करते हैं......अब आप ही लोगों से कल्याण की आशा है"

२ एप्रिल १९१२ को श्री० पं० पन्नालाल बाकलीवाल ने एक पत्र में देवेन्द्र को लिखा था—

"कल ज्ञात हुआ कि आपका विचार यहाँ रहने का नहीं है......महाविद्यालय को, या यों कहिए, जैन-समाज की रक्षा करनेवाला कोई नहीं है......महाविद्यालय उठ गया समझिए।"

ऐसे दुःसाध्य पब्लिक कार्य का भार एक कॉलेज में पढ़नेवाला युवक अपने ऊपर कैसे ले सकता था, इसमें पाठकों को आश्चर्य होगा। निस्संदेह यह असामान्य बात है, किंतु देवेन्द्र का जीवन ही असामान्य था। कॉलेज की पुस्तकों और उपाधियों से देवेन्द्र को इतना प्रेम नहीं था, जितना जैन-जाति और जैन-धर्म से। कॉलेज की पढ़ाई जैन-धर्म और जैन-जाति की सेवा के वास्ते एक निमित्त-मात्र थी। यही कारण है कि वह बरसों कॉलेज में पढ़े, किन्तु न तो कभी परीक्षा में बैठे, और न उत्तीर्ण हो पाए।

देवेन्द्र ने परम प्रेम और शुद्ध भक्ति के आवेश में उस मोक्ष-साधक स्थान का नाम, जहाँ विद्यालय स्थापित किया गया था, निर्वाणकुंज रक्खा था, और जब तक वह स्याद्वाद के मंत्री रहे, सब पत्र-व्यवहार इसी उत्साहोत्पादक नाम से होता रहा। गंगा-तट पर जो विशाल घाट इस स्थान का

श्रीबाबू निर्मलकुमारजी के पितामह ने बनवाया था, और जिसकी मरम्मत में १०-१२ बरस हुए, १०-१२ हजार रुपया लग गया, उसका वास्तविक नाम प्रभूघाट देवेन्द्र ने प्रचलित करा दिया था, किन्तु अब तो प्रभूघाट और निर्वाणकुंज को लोग भदैनीघाट के नाम से ही जानते हैं।

काशी स्याद्वाद-महाविद्यालय का नवम वार्षिकोत्सव स्याद्वाद के इतिहास में क्या, जैन-समाज के इतिहास में चिरस्मरणीय रहेगा, ऐसा जैन-महोत्सव न पहले कभी हुआ, और न भविष्य में होने की आशा व सम्भावना ही है। इसके महत्त्व का अनुभव तो उन्हीं को है, जो इस महोत्सव में सम्मिलित हुए थे, इसका कुछ वृत्तान्त जनवरी १९१४ के अँगरेजी जैन-गजेट में प्रकाशित हुआ है। सहृदय पाठक उसको पढ़कर कुछ अनुभव कर सकते हैं। जैन-मेलों और प्रतिष्ठाओं के निमंत्रण-पत्र फूल-पत्ती, बेल-बूटेदार सुनहरे अक्षरों में लम्बे-चौड़े रंगीन काग़ज़ों पर बड़े ख़र्च से छपा ही करते हैं; किन्तु जो सादगी की शान, इंडियन प्रेस द्वारा हृदयाकर्षक पद्य-रूप नीले रंग में छपे हुए इस महोत्सव के निमंत्रण-पत्र में थी, वह किसी को कब नसीब हो सकती है। हम यहाँ उसमें से केवल दो छंद ही उद्धृत करके पाठकों से पूछते हैं कि क्या कभी कहीं उन्होंने ऐसे

हृदयोद्गार पूर्ण सादे शब्दों में पहले भी कोई निमंत्रण देखा है—

प्रिय भ्रातृगण, यह है सुअवसर, सह कुटुंब पधारिये ;
निजधर्म के सत्कार्य का उत्सव महान निहारिये ।

× × ×

यह जान अपना काम ही, बस प्रेम-पूर्वक आइए ;
उत्साह से अपनाइए, हमको कृतार्थ बनाइए ।

अँगरेजी में अनेक प्रकार के नए ढंग के निमंत्रण-पत्र और दिन-प्रति-दिन नए-नए प्रोग्राम छपवाकर वितरण किए जाते थे। जिस परिश्रम का परिणाम यह था कि सभ्य-संसार के जगद्विख्यात विद्वानों का ऐसा सम्मेलन जैन-जाति के इतिहास में कभी नहीं हुआ था। २३ दिसम्बर १६१३ को रथोत्सव, २५ को प्रातः नगर-कीर्तन और शाम को काशी के टाउन हाल में मिसेज़ एनीबेसेंट के सभापतित्व में प्रथम पब्लिक सभा हुई।

हिंदू, मुसलमान, पारसी, क्रिश्चियन, थियोसोफ़िस्ट, योरपियन, जरमन, अमेरिकन सब ही थे। मंगलाचरण के पश्चात् स्वर्गीय श्री० जगमंधरलाल M. A., Barrister-at-Law ने अभ्यागत-संघ का स्वागत किया, और अपने अनुपम तथा संक्षिप्त व्याख्यान में जो जागृति समाज में भारत जैन-महामण्डल के द्वारा हुई, उसका दिग्दर्शन कराया। इसी सभा में "जैन-महिलारत्न" की पदवी स्वर्गीया श्रीमती मगनबाईजी

को दी गई थी। २६ का स्याद्वादवारिधि, वादिगजकेसरी, न्याय-वाचस्पति श्रीमान् पंडित गोपालदासजी के सभापतित्व में ब्रह्मचारी महात्मा भगवानदीनजी और पंडित अर्जुनलाल सेठी के धर्म-व्याख्यान हुए। रात्रि को बाबू सूरजभान वकील के सभापतित्व में बाबू प्रभूरामजी रावलपिंडी-निवासी का व्याख्यान "शांतिधर्म" और पंडित गोपालदासजी का "जैन-धर्म" पर हुआ।

२७ को दिन में डॉक्टर सतीशचंद्र विद्याभूषण के सभापतित्व में स्वर्गीय श्रीयुत जिनेश्वरदास मायल ने प्रभावशाली कविता पढ़ी; डॉक्टर हरमन जेकोबी, जरमनी को बान युनिवर्सिटी के प्रोफ़ेसर को, "जैनदर्शनदिवाकर" की उपाधि प्रदान की गई, और पं० गोपालदासजी का धर्म-व्याख्यान हुआ।

२८ को गंगा-तट का दृश्य देखते हुए नौका द्वारा हमारे माननीय अतिथि जरमनी के डॉक्टर स्ट्राउस और जेकोबी और अमेरिका के प्रोफ़ेसर जेम्सप्रैट प्रभूघाट पर उतरे, और जूते निकालकर विनय-पूर्वक जिनबिंब के दर्शन किए और जिन-पूजा का दृश्य देखा। स्याद्वाद के हाल में डॉक्टर जेकोबी ने विद्यार्थियों को संस्कृत-भाषा में उपदेश दिया। दिन में डॉक्टर जेकोबी की अध्यक्षता में सभा हुई। उन्होंने श्रो० बाबू देवकुमारजी के विशाल चित्र का पर्दा हटाकर जनता को

इस जैन-धर्म-प्रचारक और जात्युद्धारक महान् आत्मा का अनुकरण करने के लिये उत्तेजित किया—"जैन-सिद्धांत-महोदधि" की उपाधि डॉक्टर सतीशचंद्र विद्याभूषण को प्रदान की गई, और 'जैनधर्म-भूषण' का पद ब्रह्मचारी शीतल-प्रसादजी को दिया गया, श्री० मन्नीलाल उदानी M. A., राजकोट-निवासी का भी धर्म व्याख्यान हुआ, जो प्रशंसा-पत्र और उपाधि प्रमाण तैयार किए गए थे, वह ऐसे सुसज्जित और प्रभावोत्पादक थे कि अब वैसी वस्तु के देखने की आशा करना भ्रम है। २९ को जैन-सिद्धान्त-भवन, आरा के अनुपम धार्मिक चित्रों, ताड़-पत्र-लिपि, प्राचीन ग्रन्थों, ताम्र-पत्रों आदि की प्रदर्शिनी की गई।

पूर्वोल्लिखित महानुभावों के अतिरिक्त बनारस के लार्ड बिशप (लाट पादरी), प्रोफ़ेसर उनवाला, श्रीबाबू भगवान-दास M. A., कुमार सत्यानंदप्रसाद जर्मनी के मि० फिसकोन नरसिंहपुर के श्री० माणिकलाल कोचर, काठियावाड़ के श्री० सेठ हुकुमचंद खुशालचंद, 'दौर के श्री० सुखंतकर, राजा मोती-चंद, रानी साहबा औसानगंज, मूडबिद्री के साधु गुम्मनजी और श्वेताम्बर साधु महाराज कर्पूर विजय, क्षमामुनि, विनय-मुनि, प्रतापमुनि आदि के नाम वर्णनीय हैं, जो इस महोत्सव में पधारे थे।

जुलाई १९१४ में श्रीमान् सेठ माणिकचंद J. P. का स्वर्गवास हुआ। इन्हीं के आग्रह से देवेन्द्र ने स्याद्वाद के मंत्रित्व पद का भार ग्रहण किया था; अतएव उसी साल उन्होंने इस पद को त्याग दिया। देवेन्द्र-जैसे अथक परिश्रमी, शक्तिशाली और प्रबंध-कौशल व्यक्ति के ५-६ बरस तक काम करने पर भी स्याद्वाद की उन्नति यथेष्ट न हुई। कारण यह है कि जैन-समाज में निस्स्वार्थ भाव से काम में रत, समाजहित और धर्म-प्रचार की वेदी पर आत्मोत्सर्ग और आत्मबलिदान करनेवाले व्यक्ति विरले ही हैं; और फिर भी जैन-जनता अंधविश्वास और अज्ञान-अंधकार में पड़ी हुई, अपने आत्महित को नहीं विचार सकती। जैन-धर्म के शुद्ध मार्मिक सिद्धांत का उनको भान ही नहीं, वह रूढ़ियों को धर्म समझ रही है, और स्वार्थी समाज-वंचकों की वाहवाही में भूली हुई सच्चे समाज-सेवक का समर्थन और उसके कार्य में सहयोग नहीं करती है। एक पत्र में देवेन्द्र ने लिखा था—

'I have suffered much in life for the sake of my principles, but I knew I am strong enough to uphold my ideals in life.'

'अपने जीवन में मैंने अपने सिद्धांत के लिये बहुत कष्ट सहे, किंतु मैं जानता हूँ कि मुझमें इतनी शक्ति है कि मैं अपने उद्देश्यों को स्थिर रक्खूँगा।'

यह संस्था १९०५ में स्थापित की गई थी। उस समय आशा थी कि इस विद्यापीठ से ऐसे प्रौढ़ विद्वान् निकलेंगे, जो मंदकषायी और निर्लोभी होकर जैन-धर्म का प्रचार करेंगे; अन्य दर्शनों से तुलनात्मक विवेचन करते हुए जैनागम का महत्त्व भू-मंडल पर प्रकट करेंगे, और जैन-समाज में जो कुरीतियाँ धर्म की आड़ में प्रचलित हो रही हैं, उनको निर्मूल करेंगे, किंतु खेद! कि यह विचार स्वप्नवत् रह गया। इस विद्यालय में भी अधिकतर विद्यार्थी ऐसे ही प्रविष्ट हुए, जो रोटी-कपड़े की आशा करते आये, और विद्योपार्जन को गौण-रूप समझते रहे। जिनका चित्त सरस्वती-सेवा में लगा था, वह भी इसी उद्देश्य से, कि जिन-वाणी की सेवा से रोटी-कपड़े का वरदान प्राप्त होगा, यही कारण था कि सुप्रबंध का सर्व प्रयत्न विद्यार्थियों की स्वच्छंदता और समाज की अनुभवहीनता के कारण निष्फल रहा। प्रबंधकवर्ग का यह आशय कि ब्रह्मचारियों का सादा वेष देखकर लोगों के मन में विद्यार्थीगण के प्रति विनय भाव उत्पन्न हो, और स्वतः उनके चित में आत्म-गौरवता का प्रसार हो, पूरा न हो सका।

अस्तु, जैन-धर्म-भूषण श्रीमान् ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजी के निरन्तर परिश्रम के फल-स्वरूप यह संस्था अब भी चल रही है; और इस बात की अब भी आशा शेष है कि शायद

स्याद्वाद शुभ कर्मोदयवशात् उस उन्नति-शिखर को पहुँच जाय, जो इसके संस्थापकों का अभीष्ट था, और जिसकी पूर्ति करने में देवेन्द्र सदैव प्रयत्नशील रहे।

देवेन्द्र चरित

४

वंगीय सार्वधर्म-परिषद्

जैन-धर्म का प्रचार देवेन्द्र के जीवन का सार था। अखिल जगत् के उद्धार के वास्ते जैन-धर्म का श्रद्धान, ज्ञान और आचरण एक अद्वितीय साधन है", यह उसका दृढ़ विश्वास था और इस विश्वास से प्रेरित होकर उस विश्वप्रेमी के मन में इस भावना का सदैव संचार रहता था कि जैन-धर्म जगत्-व्यापी हो, सार्वधर्म हो। इसी विचार के आवेश में उसने ३१ दिसम्बर १९११ को स्याद्वाद-विद्यालय में एक सभा एकत्रित की। उस सभा ने देवेन्द्र को ही सभापति निर्वाचित किया। सर्वसम्मति से वंगीय सार्वधर्म-परिषद् की स्थापना हुई; और देवेन्द्र ही इसके मंत्री और कोषाध्यक्ष रहे। इसके संस्थापक सदस्य पं० पन्नालाल बाकलीवाल, पं० लालाराम, पं० गजाधरलाल, पं० तुलसीराम, देवेन्द्र और १५ अन्य विद्वान् थे।

इस परिषद् को क़रीब १०००) मिला, और इसने क़रीब एक साल काम किया। निम्न-लिखित पुस्तकों का बंगाली भाषा में अनुवाद कराके हज़ारों प्रतियाँ बिना मूल्य वितरण की गईं।

नाम	सम्पादक
१. सार्वधर्म	श्रीयुत गुरुवर्य पं० गोपालदासजी
२. जैन-धर्म	लोकमान्य श्रीयुत बाल गंगाधर तिलक
३. जैन-तत्त्वज्ञान तथा चारित्र	जर्मन विद्वान् प्रोफ़ेसर हरमन याकोबी
४. जिनेन्द्र-मतदर्पण	ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजी
५. जैनधर्म की प्राचीनता	श्रीयुत, बाबू बनारसीदासजी एम्० ए०
६. शांतिपाठ	आचार्य पद्मानंदि

यद्यपि कार्यकर्ताओं के असहयोग, और रुपए की कमी के कारण यह संस्था एक बरस से अधिक न चल सकी, किंतु इस थोड़े-से काम ने ही बंगवासियों में जैन-धर्म के अध्ययन की रुचि उत्पन्न कर दी, और अब अनेक बंगाली जैन-धर्म के न्याय, साहित्य और सिद्धांत को पढ़ते और उस पर विचार करते, और लेख और पुस्तकें लिखते हैं।

बंगीय सार्वधर्म-परिषद् की रचना के महत्त्व का एक प्रबल उदाहरण यह है कि जहाँ तक अजैनों का संबंध है, जैन-धर्म के सिद्धांत को समझने में सबसे अधिक निष्ठा और उसके प्रचार में सबसे अधिक परिश्रम बंगालियों ने किया है— Sacred Books of the jainas Series नाम की सिद्धांत शास्त्रों की ग्रंथमाला के स्थापन करने और चलाने में श्रीयुत

शरच्चन्द्र घोषाल M. A., B. L. काव्यतीर्थ, विद्याभूषण भारती, Professor of English and Philosophy सरस्वती वेदांत-परिभाषा, प्रमाण मीमांसा आदि ग्रंथों के सम्पादक ही अग्रसर हुए। उन्होंने एक पत्र में मुझे लिखा है।
There was a time when I decided to devote my life to the propagation of Jainism, and Devendra was going to start a chair of Jainism in the Benares Hindu University, and he requested me to accept the same. I expressed my assent. Devendra also had a project to start a special college for the Jainas with a Jaina Boarding which would be affiliated to a recognised Indian University. He made me promise that I would aceept the Principalship of the proposed College. He had a great desire to publish in Bengali, Hindi, and English the great works of the Jainas......There was a talk that on some future date I would write some Bengali works on Jainism. All the projects however collapsed with the death of Devendra. Otherwise by this date at least twenty volumes of the Sacred Books of the Jainas would have been published, and I would have been working elsewhere for the propagation of Jainism......His

mind was always full of schemes for the advancement of Jainism. With him departed all my opportunities to utilise the knowledge of Jainism which I acquired by long and deep study of manuscripts and printed books and which I continue even up to the present. Had there been such a spirit as Devendra living at the present day, even now I am willing to resign my post and work for Jainism till the end of my life.

"एक समय था, जब मैंने यह निश्चय किया था कि अपना जीवन जैन-धर्म के प्रचार में लगा दूँगा । बनारस हिंदू-युनिवर्सिटी में देवेन्द्र का विचार एक जैनधर्म शिक्षक के नियत करने का था, और उसने उस पद के वास्ते मेरी स्वीकृति ले ली थी। देवेन्द्र का विचार जैनियों के वास्ते विशेष करके एक जैन-कॉलेज खोलने का था, जिसके साथ जैन-बोर्डिंग भी होता और जो किसी प्रतिष्ठित युनिवर्सिटी से सम्बंधित होता, और उस कॉलेज के प्रिंसिपल पद की स्वीकृति भी मुझसे ले ली थी। देवेन्द्र की उत्कट मनोकामना थी कि जैनधर्म के महान् ग्रंथ बंगाली, अँगरेजी और हिंदी में प्रकाशित करे......यह भी बातचीत थी कि भविष्य में जैन-धर्म पर कुछ पुस्तकें मैं बंगाली भाषा में सम्पादन करूँगा, किन्तु यह सब विचार देवेन्द्र के

शरीरान्त से ढह गए, नहीं तो इस समय तक "जैनियों की पवित्र पुस्तकमाला" के अब तक कम-से-कम २० ग्रन्थ तो छप चुके होते, और मैं कहीं और ही जैनधर्म-प्रचार का काम करता होता......देवेन्द्र के मन में जैन-धर्म की प्रभावना के विचार सदैव भरे रहते थे। उसके साथ मेरे सब मनसूबे भी भरे रहते थे। उसके साथ मेरे सब मनसूबे भी चल बसे, जो मैंने जैन-धर्म के ज्ञान को, जिसे मैंने मुद्दत तक हस्त-लिखित और मुद्रित शास्त्रों के गहरे अध्ययन से प्राप्त किया था, काम में लाने के वास्ते बाँध रक्खे थे। यदि देवेन्द्र जैसा कोई जीवात्मा इस समय होता, तो मैं अब भी अपने पद को त्यागने और आजन्म जैन-धर्म की सेवा करने को तैयार हूँ।"

श्रीयुत हरिसत्य भट्टाचार्य, M. A. B. L. ने श्रीवादिदेव के प्रमाण नयतत्त्व लोकालंकार का रत्नप्रभा तिलक समेत अँगरेजी में सम्पादन किया है; और "A compendium of Jaina Philosophy" "Divinity in Jainism" नाम की दो पुस्तकें जैन-धर्म पर अँगरेजी में लिखी हैं। वह अपने एक पत्र में लिखते हैं—

"........The book that I received from Devendra was entitled 'Jaina Dharma' and written in Bengali......That I am known as a Jaina scholar now-a-days is all due to him......

About a year after Devendra's death I met Sir Ashutosh Mukherji. He was very much grieved to hear about the death of Devendra and it was then that I learnt that Devendra so young and so simple as he was, was held in great esteem by that lion of men, who told me that Jainism suffered an irreparable loss in the untimely death of Devendra."

"......देवेन्द्र से मुझे 'जैन-धर्म' नाम की पुस्तक बंगाली भाषा में मिली......। यह देवेन्द्र ही का अनुग्रह था कि जिसके कारण आजकल मैं जैन-धर्म का जानकार समझा जाता हूँ......। देवेन्द्र के देहान्त के क़रीब एक साल पीछे एक अवसर पर मेरा मिलना सर आशुतोष मुखरजी से हुआ, उनको देवेन्द्र के देहान्त का समाचार सुनकर अत्यन्त दुख हुआ और उस समय मुझे मालूम हुआ कि उस नर-केसरी के हृदय में देवेन्द्र जैसे सीधे-सादे नवयुवक का कितना आदर था, उन्होंने कहा कि देवेन्द्र के कार्योत्सर्ग से जैन-धर्म को ऐसी हानि पहुँची है कि उसकी पूर्ति असम्भव है।"

श्रीयुत हरिसत्य भट्टाचार्य के लेख अब भी अँगरेज़ी जैन गज़ेट में रहते हैं।

देवेन्द्र चरित

५.

श्रीजैन-सिद्धांत-भवन

जो आदेश श्रीदेवकुमारजी ने अपने अंतिम वाक्यों में ४ एप्रिल १९०८ को किया था, उसकी पूर्ति के अर्थ १ जून १९११ को आरा में श्रीजैन-सिद्धांत-भवन की स्थापना हुई। उस दिन की डायरी में देवेन्द्र ने लिखा है:–

श्रीजिनवाणी माता की जय

"धन्य है आज का दिन कि श्री पवित्र जैन-धर्म की उन्नति के उपाय-रूप हमारे देव प्रकृति श्रीमान् देवकुमारजी के उद्देश्य की पूर्ति करनेवाली संस्था श्री जैनसिद्धांत-भवन की स्थापना हुई। मेरा हर्ष अपरम्पार है कि श्रीजिनवाणी की रक्षा के निमित्त हरएक प्रांत से सहर्ष जैन भाइयों ने पधार-कर धर्म की उन्नति का उपाय सोचा है। मैं श्रीपरमात्मा का गुणानुवाद करता हूँ कि ऐसा दिवस जैन-धर्म के लिये उपस्थित कराया है, इस संस्था से श्रीजिनवाणी की रक्षा पूर्ण रूप से होने की संभावना है।"

सभापति के आसन पर श्रीमान् सेठ पद्मराजजी रानीवाले नियुक्त किये गये थे।

इस संस्था के मुखपत्र श्री जैन-सिद्धांत-भास्कर का सम्पादकत्व किस उत्तम रीति, विद्वत्ता और परिश्रम से सेठ पद्मराजजी ने किया, यह वह समझ सकेंगे, जिन्होंने भास्कर की किरणों का आनंद लिया है।

श्रीयुत बाबू किरोड़ीचंदजी यावज्जीवन इस सिद्धांत-भवन के मंत्री रहे। कलकत्ता-प्रदर्शिनी में जो सिद्धांत-भवन की वस्तुओं का उल्लेख है, उन सबको एकत्रित करने का श्रेय बाबू किरोड़ीचंद को है। किंतु प्रदर्शिनी की आयोजना देवेन्द्र का ही काम था। श्री० बाबू किरोड़ीचंदजी भी २२ नवम्बर १९१६ को स्वर्गवासी हो गए, और श्रीजैन-सिद्धांत-भवन के भी सब काम का भार देवेन्द्र के ही कंधों पर पड़ा। धार्मिक कामों के लिये वह कंधे पर्याप्त बलिष्ठ और प्रखर थे। सिद्धांत-भवन की स्थापना के समय इसकी वस्तुओं को सुसज्जित करके प्रदर्शित करने का कार्य देवेन्द्र ने किया था। उसके उपलक्ष्य में उसको एक स्वर्णपदक दिया गया था।

५ जून १९११ को डायरी में लिखा "मुझे प्रदर्शिनी के काम में बहुत आनंद रहा; दर्शकों की भीड़ रही......ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजी के साथ पूजन का आनंद रहा......

इन वाक्यों से देवेन्द्र की धर्म भक्ति और समाज-प्रेम छलका पड़ता है। सन् १९११ में सिद्धांत-भवन को जिस प्रदर्शिनी का आयोजन किया था, उसी विचार को कार्य-रूप में परिणत करते-करते देवेन्द्र ने नवम्बर १९१५ में कलकत्ते के वार्षिक जै रथोत्सव के अवसर पर एक जैन-साहित्य और विज्ञान प्रदर्शिनो की तैयारी की, और इस प्रदर्शिनो के कारण उस वर्ष का रथोत्सव वास्तव में धर्मप्र भावना का कारण हुआ। इस प्रदर्शिनो के संबंध में हम अपनी ओर से कुछ न कहकर केवल उन वाक्यों का उल्लेख करेंगे, जो विख्यात और प्रतिष्ठित अजैन महोदयवर्ग ने इस प्रदर्शिनी के विषय में प्रकट किये।

दैनिक पत्र 'बंगाली' ने ता० २ दिसम्बर १९१५ के अंक में लिखा था—

A glimpse of Jain culture.

From the Bengalee, Thursday, December 2nd, 1915.

The Digambara Jainas of Calcutta took the opportunity of the annual Rathjatra festival to open an exhibition of the old relics of Jain culture and civilisation.

The exhibits which are mostly the property of "The Jaina Sidhanta Bhavan" or the

Oriental Jain Central Library of Arrah were brought down to Calcutta to be exhibited by Kumar Devendra Prasad, the General Secretary of the Library, and considering that only six hour's time was allowed for the Secretary to select and send the exhibits down to Calcutta from Arrah, the collection must be regarded as most successful. The site of the Exhibition was the garden house in Belgachia temple gardens. The place was lavishly decorated with gorgeous and costly tapestries, flags, and articles of silver comprising mostly of Jain symbols, facsimiles of temples, etc, all specimens of exquisite workmanship.

On Sunday the Exhibition remained open to the public and Calcutta people did not lose this opportunity of seeing evidence of the culture and civilisation of the followers of Thirthamkaras, perhaps hitherto unknown to many of them.

Visitors began to pour in from 2 P. M, when the Exhibition was opened and continued till it was closed. The visitors consisted mostly of literary men, historians, connossieurs of art, e. g. among others Sir John and Lady Woodroffe, Dr. Sir Ashutosh Mukherjee,

Mr. Abanindra Nath Tagore, C. I. E., Mr. Gaganendra Nath Tagore, Mr. Samarendra Nath Tagore, Mr. Rathindra Nath Tagore, Pandit Hara Prasad Sastri, C. I. E., Prof. Amulya Charan Vidyabhusan, Dr. Satis Chandra Vidyabhusan, Babu Sarada Charan Mitra, Babu Nagendra Nath Basu, Rai Yatindra Nath Chaudhuri, all of whom were unanimous in their opinions as to the solid work done by the Jain Central Library in bringing the hitherto-unknown facts regarding Jain culture to the knowledge; of the people and as to the immense good they have done to the students of oriental learning and to the public at large by organising the exhibition which afforded that opportunity. The exhibits mostly were rare manuscripts, numismatic collections, old paintings, etc., and each item was explained to the visitors by Kumar Devendra Prasad who was all attention to them.

The manuscript Section of the exhibition contained about a hundred or so, very old and rare writings in Prakrit, Bengali, Dravidian, and other languages on palm leaves, and plantain leaves, and comprised of words on Philosophy, Astronomy, Geography and various other sub-

jects discoursed from the Jain point of view. Among these the most important are:-

Loka-vibhag and Lokatatwa, on palm leaf, a treatise on Jain cosmogony, no less than 1,700 years old.

Gommatsar, astandard work on Jain philosophy, on Jiva and Karma, by Nemi Chandra Siddhanta Chakravarti.

Bhadrabahu Sam'hita-A work on Jain Law—an English translation of which will, it is understood, shortly be published.

Triloka Sar, a palm leaf Mss. 603 years old, a work on Jain Cosmogony.

A Bengali manuscript on plantain leaves, Bhupal Chaubisi, every sloka of which is illustated by pictures in four colours and real gold finish 490 years old.

A Dravidian manuscript on palmira leaves. Dhavala and Jai Dhavala, the most ancient and standard works on Jain philosophy and religion, comprising 95.000 and 125,000 slokas respectively. It is said to be the only copy existant in India.

Numismatic collections consisted of coins, of Kushan period and the period of Ajatasatru and Alexander.

Some specimens of Jain archaeology were also exhibited. Some Tibetan Jain flags and a bulky Mss. in Tibetan were also there.

Among the pictures, all of whom very old, were some fine specimens of fine workmanship, exquisite piece of Jain art. The 16 dreams of the Jain King Chandra Gupta, 16 dreams of the mother of Thirthankara Mahavira before the birth of the world teacher, and the Hall of Auditorium of Lord Mahavira, preaching sermons to the living beings of the world were three paintings, by Mirsahib, Court painter of the late Wajid Ali Shah, Nawab of Oudh. They were painted on papers which looked like enamelled plates. Besides these, there were facsimiles of copper plates, and photographs among which was the famous Jain temple at Pawapuri, near Raj Griha Hills in a pond of 151 Bighas-the place where Mahavira attained his "nirvana"

बंगाली दैनिक पत्र ता० २ दिसम्बर १६१५। कलकत्ते की दिगम्बर जैन-समाज ने वार्षिक रथोत्सव के मेले पर जैनधर्म की प्राचीन सभ्यता और गौरव के स्मारकों की प्रदर्शिनी की। यह वस्तुसमूह, विशेषतया श्रीजैन-सिद्धांत-भवन आरा से लाकर श्रीयुत कुमार देवेन्द्रप्रसाद ने सजाया था और जब इस पर

ध्यान दिया जाय कि ये अनेकानेक चित्ताकर्षक वस्तुएँ केवल ६ घंटे में एकत्रित कर ली गई हैं, तो प्रबंधक महोदय के प्रयत्न को सफलता की सराहना करनी पड़ती है। यह प्रदर्शिनी बेल-गेचिया मंदिर के बग़ीचे के भवन में हुई थी।

यह स्थान बहुमूल्य चमकते हुए परदों और झंडियों से सुसज्जित था, बढ़िया कारीगरी के चाँदी के अष्ट प्रातिहार्य आदि धार्मिक चिह्न रूप वस्तुएँ प्रदर्शित की गई थीं।

रविवार को प्रदर्शिनी पब्लिक के वास्ते खुली हुई थी, और कलकत्ता-निवासियों ने तीर्थंकरों के अनुयायियों की सभ्यता और उत्कर्ष के प्रमाणों को देखने का अवसर हाथ से नहीं जाने दिया, जिनसे अधिकतर जनता अब तक अनभिज्ञ थी।

दर्शक-समूह की भीड़ २ बजे दिन से बंद होने के समय तक बराबर ही रही। साहित्य, इतिहास और चित्रादि कला के विज्ञ महोदय अधिकतर थे, जैसे सर जान, और लेडी वुडरफ़, सर आशुतोष मुखरजी, श्री० अवनीन्द्रनाथ ठाकुर C. I. E., श्री० गगनेन्द्रनाथ ठाकुर, श्री० समरेन्द्रनाथ ठाकुर, श्री० रथीन्द्रनाथ ठाकुर, पंडित हरप्रसाद शास्त्री C. I. E., प्रोफ़ेसर अमूल्यचरण विद्याभूषण, डॉक्टर सतीशचंद्र विद्या-भूषण, श्री० शारदाचरण मित्र, श्री० नगेन्द्रनाथ वसु, राय यतीन्द्रनाथ चौधरी। ये सब सहमत थे कि श्री० जैन-सिद्धांत-

भवन ने जैनोत्कर्ष-सूचक वस्तुओं को पब्लिक के समक्ष रखके बड़ा ठोस काम किया है, और पूर्वीय विद्या के प्रेमियों को अत्यंत लाभ पहुँचाया है।

प्रदर्शित वस्तु विशेषतया दुष्प्राप्य लिखित ग्रंथ, सिक्कों का समूह, प्राचीन चित्र थे, और कुमार देवेन्द्रप्रसाद सब दर्शकों को जी लगाकर सब वस्तुओं का स्वरूप समझाते जाते थे।

लिखित ग्रंथ-विभाग में क़रीब १०० दुष्प्राप्य ग्रंथ, प्राकृत, बंगाली, द्राविड़ और अन्य भाषाओं में ताड़पत्र, भोजपत्र पर जैन ज्योतिष, भूगोल, सिद्धांत आदि विषय के थे, जिनमें कुछ का उल्लेख नीचे किया जाता है—

१—१,७०० वर्ष से अधिक प्राचीन ताड़पत्र पर लिखा हुआ लोक-विभाग, लोक तत्त्व।

२—नेमिचन्द्र सिद्धांत चक्रवर्ती-कृत गोम्मटसार जीवकांड, कर्मकांड।

३—त्रिलोकसार तालपत्र पर लिखा हुआ ६०३ वर्ष पुराना।

४—कदलीपत्र पर बंगीय भाषा में लिखित भूपाल चौबीसी। प्रत्येक श्लोक के अर्थ चार रंग में सुनहरे चित्रों से निरूपित किए गए हैं—४९० वर्ष पुरानी।

५—द्राविड़ी, कन्नड़ी-अक्षरों में लिखे हुए धवल, जयधवल,

जैन-सिद्धान्त के महान् प्राचीन और प्रामाणिक ग्रंथ, जिनमें १५००० और १२५००० श्लोक हैं।

६—कुशान, अजातशत्रु और सिकन्दर के समय के सिक्के।

७—जैन पुरातन मन्दिरों के भग्नावशेष।

८—तिब्बत के जैन-मंडे—और तिब्बतीय भाषा में लिखा हुआ एक मोटा ग्रंथ भी वहाँ था।

९—जैन-चित्र-कला-प्रदर्शक अनेक चित्र थे। नवाब वाजिद अली शाह अवधनरेश के दरबारी चित्रकार मीर साहब के बनाए हुए जैन-सम्राट् चंद्रगुप्त के १६ स्वप्न, महावीर स्वामी के अवतार-सूचक उनकी माता के १६ स्वप्न, समस्त भूमंडल के प्राणियों को धर्मोपदेश का दर्शक महावीर समवसरण, ये तीन चित्र भी वहाँ थे। यद्यपि वह काग़ज़ पर बने थे, किंतु यह मालूम पड़ता था कि मीनाकारी में बने हैं। इनके अतिरिक्त ताम्रपत्रों की प्रतिलिपि और फ़ोटोग्राफ़ थे, जिनमें राजगृह पर्वतावली के निकटस्थ पावापुरी का विख्यात जिनालय, १५२ बीघे के तालाब में, महावीर भगवान् के निर्वाण-क्षेत्र का सूचक चित्र उपस्थित था।

सर आशुतोष मुखरजी हाईकोर्ट जज कलकत्ता ने दर्शक-सम्मति-पंजिका में लिखा था—

"हस्त-लिखित ग्रंथों और चित्रों के इस अनुपम समुच्चय को देखकर मुझे अत्यंत प्रसन्नता और लाभ हुआ। प्राचीन प्राच्य विद्या के प्रेमी इस प्रदर्शिनी के आयोजकों के कृतज्ञ हैं, और मुझे आशा है कि विद्वज्जन जैन-धर्म के पुनरोद्धार और प्रचार के संचालन में उचित प्रयत्न करके भाग लेंगे।"

The Hon'ble Justice Sir Ashutosh Mookerjee, Saraswati, Sastra Vachaspati, Kt., M. A., D. L., D. Sc., F. R. A. S., F. R. S. E., C. S. I., Ex-Vice-Chancellor, Calcutta University, and Judge, Calcutta High Court:-

"I have visited this unique collection of manuscripts and pictures with great interest and profit. The promoters are entitled to the gratitude of all true lovers of the ancient learning of the East and I hope scholars will contribute their share of effort to make the movement for revival and spread of Jaina learning a success.

सर जान वुडरफ़ ने लिखा था—

"सर जान और लेडी वुडरफ़ इस समुच्चय को देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए, और जो पुस्तकें और लेख उनको दिखलाए गए, उनसे यह जानकर कि अज्ञात जैन-साहित्य को प्रकाश में लाने के अर्थ इतना प्रयत्न हो रहा है, उनको हर्ष

हुआ—जैसा कि सर आशुतोष मुखरजी ने भले प्रकार कहा है कि प्राच्य विद्या के अभ्यासी आयोजक-मंडल के अनुगृहीत हैं।"

The Hon'ble Justice Sir John Woodroffe, Kt., M. A., B. C. L., Bar-at-Law, and Judge, High Court, Calcutta:-

"Sir John and Lady Woodroffe have been much interested in this collection and are pleased to find from the books and papers shown them that so much is being done to bring to light the so little known Jaina Literature, as Sir Ashutosh Mukerjee has well said the promoter have a claim to the gratitude of Oriental learning."

राय यतीन्द्रनाथ चौधरी श्रीकंठ M. A., B. L. महामंत्री बंगीय साहित्य-परिषद् बंगाल का लेख है—

श्रीयुत कुमार देवेन्द्रप्रसाद ने जैन-साहित्य और सिद्धान्त के पुनर्जीवन के अर्थ महान् उद्योग किया है। मैं नहीं जानता कि उनके प्रति अपनी कृतज्ञता किस प्रकार प्रकट करूँ। उन्होंने हम लोगों के वास्ते जैन-धर्म और सिद्धान्त के दुष्प्राप्य और बहुमूल्य हस्त-लिखित ग्रन्थ का देखने का एक अच्छा अवसर प्रदान किया है। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि कुमारजी द्वारा आयोजित प्रदर्शिनी को देखकर

आज शाम को मुझे अत्यन्त हर्ष हुआ...जैन-साहित्य के रत्नों को इन दिनों की शिक्षित समाज के समक्ष रखने के अर्थ जो श्रेष्ठ प्रयत्न वह कर रहे हैं, मैं उसकी सफलता की मनोकामना करता हूँ—

Raya Yatindra Nath Chaudhari Srikantha, M. A., B. L., General Secretary, Bangiya Shahitya Parishad of Bengal, Calcutta:-

"I do not know how to thank Sriyut Kumar Devendra Prasad who has done so much for the resuscitation of the Jaina Literature and Philosophy. Further more he has given us an excellent opportunity to see the rare and valuable manuscripts of the Jaina works on Philosophy and Religion. It is needless for me to say that I am exceedingly pleased with what I saw this evening at the exhibition organised by the Kumar. I wish all success to his noble endeavour to bring the jewels of the Jaina Literature before the educated public of these days."

वेदान्तरत्न श्रीयुत हीरेन्द्रनाथदत्त M. A., B. L., प्रेसिडेंट थियोसोफिकल सोसाइटी कलकत्ता का कथन था।

जैन-सिद्धान्त-भवन की प्रदर्शिनी के आज मैंने दर्शन किये, और जो हस्त-लिखित पुस्तकों और चित्रों का अद्वितीय समुच्चय

यहाँ देखा, उससे बड़ा चित्ताकर्षण हुआ। भारतवर्ष के अनेक धर्म और साहित्य में जिनका मन लगा है, उनको सदैव ऐसी वस्तुओं को जैसे इस प्रदर्शिनी के आयोजकों ने यहाँ सुसज्जित किये हैं, आनंद होता है, और मैं उनको हार्दिक आशीर्वाद देता हूँ। मेरी केवल यह इच्छा है कि संयोजक उन दुष्प्राप्य पुस्तकों में से जो उन्होंने प्रदर्शित की हैं, अवश्य कुछ तो जल्दी ही छपवाकर प्रकाशित कर देंगे, जिससे विद्वत् समाज को उनके पढ़ने और विनय करने का अवसर मिले।

Babu Hirendra Nath Datta, Vendantaratna, M A., B. L., President, Theosophical Society, Calcutta:-

I have visited their Central Jain Oriental Library Exhibition this day, and felt much interested in the unique collection of pictures and manuscripts which I have seen. To those who are interested in the Religions and Literatures of India it is always of interest to come across exhibits like the ones arranged here by the promoters of the Exhibition and I tender them my hearty good wishes. I only wish that it will be possible for them to make early arrangement for the publication of some of the rare books which they have exhibited

so that the learned world may have an opportunity of studying and appreciating them.

श्रीकिरणचंद्रदत्त, माननीय मंत्री, बंगीय कायस्थ-सभा और सहकारी मंत्री बंगीय साहित्य-परिषद् ने अपने विचार इस प्रकार प्रकट किये थे—

जैन-धर्म-साहित्य के रोचक समुच्चय, अपने परिमित ज्ञान के अनुसार पढ़कर और जैन चित्र और प्राचीन यंत्रों को देखकर आज मुझे अत्यन्त आनन्द हुआ है; मैं आशा करता हूँ कि ऐसी प्रदर्शिनी भारतीय साहित्य, इतिहास, प्राचीन विभाग और कला के सच्चे प्रेमी देखेंगे; कलकत्ते के एक विख्यात जैन-मन्दिर में ऐसी बढ़िया प्रदर्शिनी करने का विचार करनेवाले और उसके मंत्री को मैं नहीं जानता कि किस प्रकार धन्यवाद प्रदान करूँ—

Kiran Chandra Datta, Honorary Secretary, Bengal Kayastha Sabha, and Assistant Secretary. Bangiya Shahitya Parishad:—

This day I was delighted to see and study as much as I could, and my little knowledge permitted, the nice collection of the Jaina Dharma Literatures, together with the pictures and charts of antiquity. I hope such exhibitions should be seen and visited by every true lover

of Indian Literature, History, Antiquity and Art. I don't know how to thank the originator and the Secretary of the grand exhibition in a famous Jain Temple of Calcutta.

इन उदार हृदय महोदय गण की हार्दिक मनोकामनाओं को पढ़कर हर्ष होता है किन्तु खेद इस बात का है कि देवेन्द्र के पश्चात् फिर कभी ऐसी विशाल प्रदर्शिनी की आयोजना का अवसर नसीब नहीं हुआ।

स्वर्गीय बाबू देवकुमारजी के सुयोग्य सुपुत्र श्री० बाबू निर्मलकुमारजी ने जैन-सिद्धान्त-भवन के वास्ते अब तो क़रीब २५०००) की लागत का एक शोभनीय, चित्ताकर्षक और विशाल भवन बना दिया है; प्रदर्शनीय पदार्थ और क़रीब ६००० ग्रंथ चमकती हुई शीशेदार अलमारियों में सुसज्जित हैं, और श्रीयुत भुजबली शास्त्रीजी वहाँ उपस्थित रहकर जिन-वाणी की सेवा और दर्शनार्थ आगन्तुक जैन-अजैन सबको ही यथेष्ट सहायता करते रहते हैं। किन्तु फिर भी हम यह कहने के लिये क्षमा चाहते हैं कि जो महत्त्व और उप-योगता इस भवन को श्रीयुत बाबू किरोड़ीचंद और देवेन्द्र के जीवन में, जब कि इस भवन के पदार्थ श्रीशान्तिनाथ जिनालय के एक छोटे कमरे में थे, प्राप्त थी, वह अब नहीं है। अब इसका अनुभव करना मुश्किल है कि शास्त्रों को प्राप्त करने,

उनकी सूची बनाने में कितना परिश्रम पड़ा होगा। देवेन्द्र जिन-वाणी के अनन्य भक्त थे, श्रीजैन-सिद्धान्त-भवन की सेवा उनके लिये केवल कर्तव्य ही नहीं, बल्कि व्यसन-रूप थी। ताड़-पत्र, भोजपत्र-लिखित ग्रंथों को सँभालते रहना, उनके वेष्टन खोल-खोलकर दर्शकों को दिखलाना, उनके महत्त्व की बात समझाना देवेन्द्र के वास्ते कठिन काम नहीं, मनोरंजन था। जैन-विद्वानों में से केवल श्रीयुत पंडित युगलकिशोरजी ने तो इस भवन की सेवा बहुत दिनों तक वहाँ रहकर की है; और वहाँ सुरक्षित ग्रंथों का मथन और मनन किया है; किन्तु अन्य जैन विद्वान् तो केवल मनोरंजन-मात्र भवन के दर्शन करते हैं। और भवन की सेवा करने या द्रव्य से सहायता करने का विचार तो जैन जनता के मन में आता ही नहीं।

अस्तु, श्री बाबू निर्मलकुमारजी इस भवन की सेवा-भक्ति उदार हृदय से कर रहे हैं। हम आशा करते हैं कि वह समय आवेगा, जब "श्रीजैन-सिद्धान्त-भास्कर" भवन से पुनः प्रकाशित होकर जैनागम के महत्त्व का प्रचार करेगा, और जैन विद्वान् इस भवन में सुसज्जित जैन-शास्त्रों का अध्ययन किया करेंगे, और जैन जनता शक्तितः द्रव्य से इस भवन की सेवा करना अपना धार्मिक कर्तव्य समझेगी।

श्रीमुनिसुव्रत काव्य १९२९ में श्रीबाबू निर्मलकुमार

द्वारा श्रीदेवकुमार-ग्रंथमाला का प्रथम पुष्प रूप प्रकाशित हुआ है, इसको अँगरेजी अनुवाद-सहित परमात्माप्रकाश के ढंग पर छपवाने का विचार देवेन्द्र के मन में १९१५ में ही था।

प्राकृत बृहद् कोष के सम्पादन और प्रकाशित करने के लिये देवेन्द्र निरन्तर प्रयत्न करते रहे। अब एक प्राकृत कोष श्री-हरगोविंदसिंह शास्त्री द्वारा प्रकाशित हुआ है।

जैन तीर्थ-स्थान, अतिशय क्षेत्र तथा प्राचीन मंदिरों, मूर्तियों, शिलालेखों को फोटोग्राफ-सहित प्रकाशित करने के लिये देवेन्द्र ने बहुत सामग्री एकत्रित की थी।

श्रीजैन-सिद्धान्त-भवन जैनागम के प्रकाश व प्रचार का केन्द्रस्थान हो, यह हमारी मनोकामना है।

६.

देवेंद्र और सुमेरचंद दि० जैन होस्टेल, इलाहाबाद.

"Religious studies 2 hours. Performed a pilgrimage to Singhpurijee, visited the office of Archaelogy. Took some notes on Jainism. The most gladsome news worth recording is the foundation of a Jaina Boarding House at Allahabad. Mr. Jaini has been instrumental in founding this institution. I wish I could be of some use to the institution.

Devendra Diary. 1-1-11.

"शास्त्र स्वाध्याय २ घंटे, सिंहपुरीजी की यात्रा की, पुरातत्त्व-विभाग के दफ्तर में जाकर जैनधर्म-विषयक नोट लिखे। लिखने योग्य अत्यंत हर्ष का समाचार, इलाहाबाद में जैन बोर्डिंग हाउस के स्थापित होने का है। यह संस्था मिस्टर जैनी के प्रयत्न से स्थापित हुई है, मेरी इच्छा है कि मैं इस संस्था को कुछ लाभ पहुँचा सकूँ।"

देवेंद्र-डायरी, १-१-११

प्रात:स्मरणीय दानवीर श्रीयुत सेठ माणिकचंदजी तथा

बाबू देवकुमारजी ने उच्च कोटि की लौकिक शिक्षा के साथ-साथ धार्मिक शिक्षा के प्रबंधार्थ (बोर्डिंग हाउस) जैन-छात्रालयों की स्थापना का उत्तम और परमोपयोगी कार्य प्रारंभ किया। उनके उदार हृदय में "वसुधैव कुटुंबकम्" की प्रबल भावना थी। श्रीयुत सेठ माणिकचंदजी ने तो मैसूर-प्रांत से लेकर लाहौर और प्रयाग तक छात्रालयों की स्थापना की, और बाबू देवकुमारजी ने पहलेपहल मँगलोर में जैन-बोर्डिंग हाउस की स्थापना की थी, उनका धर्म प्रेम, वात्सल्य और प्रभावना अंग अपने ही निवास-स्थान तक परिमित नहीं था, वह सच्चे और पूरे दानवीर थे। जिस प्रांत में, जिस स्थान में आवश्यकता देखी, वहीं ही सहायता दी। बाबू देवकुमारजी की दक्षिण तीर्थ-यात्रा में इस उदारता के अनेक उदाहरण हैं, और यदि ये दो सच्चे दानवीर जीवित रहते, तो जैन-छात्रालय तो भारतवर्ष के समस्त विश्वविद्यालयों और उच्च शिक्षालयों के साथ स्थापित हो जाते, बल्कि जैन-कॉलेज और संभवतः जैन-युनिवर्सिटी की भी स्थापना हो जाती।

इस बोर्डिंग के स्थापित कराने, इसकी उन्नति करने और इसका इलाहाबाद युनिवर्सिटी से संबद्ध कराने का श्रेय अधिक अंशों में देवेन्द्र को ही प्राप्त है। इसके स्थापित होने के कुछ समय पश्चात् २१ सितंबर १९१३ को इस छात्रा-

लय के अंतर्गत एक "जैन-भ्रातृ सभा" की स्थापना की गई और देवेंद्र उसके सभापति नियत होकर यावज्जीवन इस पद पर सुशोभित रहे। श्रीनिहालकरण सेठी, जो अब डॉक्टर आव-सायंस की पदवी प्राप्त करके काशी-विश्व-विद्यालय में विज्ञान-विभाग के महोपाध्याय हैं, इसके प्रथम मंत्री थे। श्री० छीतरमल सोगानी भी, जो डॉक्टर आव-सायंस की पदवी प्राप्त करके काशी-विश्वविद्यालय में विज्ञान-विभाग के उपाध्याय हैं, इसके सदस्य थे। श्रीनेमीशरणजी, जो कई वर्ष से संयुक्त-प्रांत की लेजिस्लेटिव कौंसिल के मेंबर हैं, और स्वदेश-भक्त, खद्दरव्रती और वकालत के व्यापार के त्यागी हैं, इसके प्रथम पुस्तकालयाध्यक्ष थे। यह संस्था केवल नाम की संस्था न थी और अब भी संयुक्त-प्रांत में जैन-समाज की यह एक जीती-जागती संस्था है। डॉक्टर लक्ष्मीचंद्र जैन, M. A., LL. B., Ph. D. संयुक्त-प्रांतीय महाजनी कमेटी (Provincial Banking Inquiry Committee) के मंत्री रहे हैं, और इलाहाबाद-विश्वविद्यालय के अध्यापक की पदवी से अब पंजाब युनिवर्सिटी लाहौर में Reader and Head of the Dapartment of Economics हैं। श्री० त्रिलोकचंद जैन M. A., उच्च पद पर प्रतिष्ठित हैं, और श्रीमहेशचंद्र जैन उच्च शिक्षा प्राप्त करके लंदन से

वापस आये हैं। इन तीनो भाइयों ने इस संस्था की अहर्निश सेवा करके इसको उन्नति पर पहुँचाया है, और Jaina Hostel Magazine इस संस्था का मुख-पत्र एक उच्च कोटि की साहित्यिक सामग्री से पूर्ण रहता है।

श्रीयुत पंडित हीरालाल जैन M. A. अमरावती कॉलेज में संस्कृत-प्रोफ़ेसर हैं। श्रीयुत रतनलाल B. A., LL. B., वकील, वकालत के पेशे को छोड़कर भा० दि० जैन-परिषद् के मंत्री पद पर रहते हुए समाज-सेवा कर रहे हैं। ये सब इसी संस्था के सदस्य रहे हैं।

इस संस्था के सदस्यों में से अधिकतर निम्न-लिखित प्रतिज्ञा पालन कर रहे हैं—यह प्रतिज्ञा लेने की प्रथा देवेन्द्र की अध्यक्षता में ही प्रारम्भ हुई थी। केवल सभा में व्याख्यान और प्रस्ताव द्वारा समाज के हितकर और लाभप्रद बात बनाने की प्रथा तो बरसों से चल गई है; किंतु उनको प्रतिज्ञा-रूप अपने जीवन में व्यवहार करने का मार्ग देवेन्द्र ने ही प्रचलित किया था।

१. मैं अपनी धर्म-पत्नी और अपने आश्रित अन्य महिलाओं को शिक्षा का यथोचित प्रबन्ध यथाशक्ति करूँगा। और यदि कोई अन्य प्रबन्ध न हो सका, तो स्वतः उनको शिक्षा प्रदान करूँगा।

२. मैं पर्दे की पाप-प्रथा को दूर करके अपने घर में अपनी धर्म-पत्नी से पर्दा न कराऊँगा।

३. मैं झूठ विश्वास को जो नैतिक कायरता से उत्पन्न होता है, परास्त करूँगा, और इस कार्य का प्रारम्भ अपनी धर्म-पत्नी के बिछुआ, चूड़ी आदि मूढ़-विश्वास-मूलक गहनों को हटाकर करूँगा।

४. विवाहोत्सव में जो गन्दे गीत गाये जाते हैं, उनमें अपनी धर्म-पत्नी को सम्मिलित होने न दूँगा।

५. बालविवाह समाज-घातक है, मैं किसी बालविवाह में सम्मिलित न हूँगा। और यथाशक्ति अपने भाई-बहनों का विवाह बाल्यावस्था में न होने दूँगा।

६. कन्या-विक्रय के निंद्य रिवाज को अपनी शक्ति-भर बंद करूँगा; और ऐसे विवाह में सम्मिलित न हूँगा।

७. पब्लिक में साम्प्रदायिक विवाद अत्यंत हानिकर है। इसने समाज को अनेक छोटी-छोटी सम्प्रदायों में विभाजित कर दिया है। इसको रोकूँगा।

८. महिला-समाज का यथेष्ट आदर करूँगा, और भ्रातृ-भाव से उनकी सहायता करूँगा।

९. स्त्री-समाज और दलित दल के संबंध में न्याय-व्यवहार मेरा नियम होगा।

१०. अनैक्य ने भारत-समाज का विध्वंस कर दिया है; मैं पारस्परिक विवाद को मिटाने का यथाशक्ति प्रयत्न करूँगा।

११. गणिका का नाच नहीं देखूँगा; और यथाशक्ति गणिका का नाच न होने दूँगा।

१२. स्वदेशी वस्तु मोल लूँगा; और नुक़सान सहकर भी स्वदेशी कला को उत्तेजित करूँगा।

१३. बाल-विधवा के विवाह की रोक न होनी चाहिए; और ऐसे विवाह में मैं सहर्ष सम्मिलित हूँगा।

यदि इनमें से कुछ भी नियमों का पालन हमारी समाज के सेठ-साहूकार, धन-सम्पन्न सज्जन प्रतिज्ञा-रूप से करना प्रारम्भ कर दें, तो समाज अपनी पतित अवस्था से शीघ्र ही उत्थान कर ले।

सन् १९२० के नवम्बर में देवेन्द्र ने जैन-होस्टेल में ऐसा बढ़िया कवि-सम्मेलन कराया था, जैसा इलाहाबाद में कभी कहीं नहीं हुआ था, और न अब तक हुआ। इस सम्मेलन का सम्पूर्ण कार्य पद्य ही में हुआ था। निमंत्रण-पत्र, स्वागत-समिति के अध्यक्ष और देवेन्द्र के भाषण सब पद्यात्मक थे और सभापति का वक्तृत्व तो पद्य-स्वरूप होना ही था।

उपस्थित महाशयों में Capt. Rust, Director of Public Instruction U. P., Mr. P. Biggane, Dy. Inspector General of Police C. I. D., Mrs. Biggane,

Prof. & Mrs. Ewing, Mrs. Radford, Prof. Moody के नाम उल्लेखनीय हैं। प्रोफेसर शिवाधार पांडे अपनी कविता पब्लिक में पढ़ते हुए सदा संकोच करते हैं, किंतु देवेन्द्र के प्रेम ने उनके स्वाभाविक संकोच को दूर हटा दिया। कवि-सम्राट् पंडित अयोध्यासिंह उपाध्याय ने भी देवेन्द्र के प्रेमपाश में फँस कर इस कवि-सम्मेलन का प्रमुख पद स्वीकार कर लिया था। और उनके पद्यमय भाषण ने जनता को मुग्ध कर दिया था।

बंगाली संगीत मंगल के मधुर रस का स्वादिष्ट और हर्षोत्तेजक पान अँगरेजों तक को रुचिकर था, और इस प्रेम-पूरित वायु-मंडल का इतना प्रभाव पड़ा कि अँगरेजों तक ने चंदन तिलक अपने माथे पर सहर्ष लगवाए "इस सम्मेलन का कार्य पाँच घंटे तक चला, और उपस्थित जनता का यह न मालूम हुआ कि इतना समय व्यतीत हो गया।"

देवेन्द्र की मनोकामना थी कि यह होस्टेल एक अद्वितीय संस्था हो; और जैन कॉलेज का रूप ग्रहण करके, जैन युनिवर्सिटी का बीज बन जावे, जहाँ जैन-प्रेस से जैनागम प्रकाशित होकर अजैन संसार में जैन-धर्म का प्रचार और प्रकाश करे।

देवेन्द्र कहा करते थे कि वह एक बड़ा झंडा लेकर जैनागम के मार्मिक ज्ञाताओं का संघ बना कर धर्म-प्रचारार्थ संसार के सब देश-प्रदेशों में विहार करेंगे।

इस कवि-सम्मेलन में मंगलाचरण के समय उच्च पदाधिकारी अँगरेज़ स्त्री-पुरुष, हिंदू, मुसलमान, ईसाई सब विनयावनत होकर खड़े थे, और जो कुछ जैनत्वमय वातावरण दिखाई देता था, वह सब देवेन्द्र ही का काम था।

सन् १९१३ में शिमला पहाड़ पर जैन-मंदिर की प्रतिष्ठा स्वर्गीय श्रीमान् पंडित उमरावसिंहजी ने कराई थी। पंडित उमरावसिंह उन विरले जैन-पंडितों में से थे, जिन्होंने पूजा-प्रतिष्ठा को अपना रोजगार नहीं बना रक्खा था; जो गृहस्थों को अनुचित प्रकार दबाकर, दुःख देकर, हजार-हजार रुपया, जेवर, कपड़ा, भेट, बिदाई, प्रतिष्ठा कराई का न लेते थे, जो स्पष्ट पाठ उच्च स्वर से पढ़ते थे। प्रतिष्ठा-विधि, प्रतिष्ठा-पाठ, मंत्र आदि को छिपाते नहीं थे। वह पूजा, प्रतिष्ठा, शास्त्रोपदेश को धर्म का काम समझकर जनता के कल्याणार्थ करते थे, व्यापार के रूप में अपने जीवन-निर्वाह और कुटुम्ब-पालन के वास्ते नहीं करते थे। इस दृष्टि से यह प्रतिष्ठा असामान्य थी। किन्तु इस प्रतिष्ठा के अवसर पर जो रथोत्सव हुआ, उसको महोत्सव बनाने का श्रेय विशेष करके देवेन्द्र को ही प्राप्त है। उन्होंने ८००) के अपने छपाये हुए जैन-धर्म के ग्रंथ उस अवसर पर बिना दाम बाँटे थे।

७.

सेंट्रल जैन-कॉलेज

जैन-कॉलेज का विचार १८९० में, पहले-पहल मुरादाबाद-निवासी पंडित चुन्नीलाल और मुंशी मुकुंदलाल ने प्रकट किया था। जून १९०२ के जैन-गजट में उसकी आवश्यकता दिखलाई गई थी। दिसंबर १९०४ में अंबाला-महासभा के अधिवेशन पर एक डेपुटेशन जैन-कॉलेज के वास्ते द्रव्य एकत्रित करने के लिये निर्वाचित हुआ। इस प्रतिष्ठित मंडल में मुरादाबाद के पंडित चुन्नीलाल और मुंशी बाबूलाल वकील, नजीबाबाद के रायबहादुर साहु जुगमंदरदास, दिल्ली के भाई मोतीलाल और लाला जिनेश्वरदास मायल, पं० अर्जुनलाल सेठी, पं० रघुनाथदास सरनौ, ब्र० शीतलप्रसादजी आदि थे। इन महानुभावों ने संयुक्तप्रांत, मध्यप्रांत और राजपूताना में दौरा करके ३०-४० हजार रुपया एकत्रित किया।

कार्यकर्ताओं में मतभेद के कारण जैन-कॉलेज की स्थापना न हो सकी, और संचित द्रव्य महाविद्यालय के ध्रौव्य फ़ण्ड की मद में पड़ा रह गया।

जैन-कॉलेज की आवश्यकता का जितना प्रभाव देवेंद्र के हृदय पर था, शायद ही किसी दूसरे पर पड़ा हो। यह अतिशयोक्ति नहीं, बल्कि अक्षरशः सत्य है कि वह सेंट्रल जैन-कॉलेज को जाप जपा करते थे। काग़ज़ के दस्ते-के-दस्ते उन्होंने "सेंट्रल जैन-कॉलेज" शब्द लिख-लिखकर भरे हैं, और यदि वह जीवित रहते, तो सेंट्रल जैन-कॉलेज स्थापित हो गया होता।

श्रीयुत शरचंद्र घोषाल के पत्र का ऊपर पृष्ठ ४२ पर उल्लेख किया जा चुका है, जिसमें उन्होंने लिखा है कि देवेंद्र ने उनसे यह वचन ले लिया था कि वह जैन-कॉलेज के प्रिंसिपल होंगे, और वह अब भी अपना प्रण पूर्ण करने को तैयार हैं। किंतु जैन-समाज की दशा तो देवेंद्र के देहावसान के बाद इन १० बरसों में अत्यंत शोचनीय हो गई है।

रायबहादुर जुगमंदरलाल जैनी ने लिखा था—"जैन-कॉलेज की स्थापना के वास्ते अलीगढ़ के सर सय्यद अहमद जैसे व्यक्ति की जैन-समाज में उत्पन्न होने की आवश्यकता है... जैन-समाज में ऐसा व्यक्ति कहाँ है ? जैन-समाज में तो चाहे श्वेतांबर हो, चाहे दिगंबर, अभी तक ऐसा एक भी सेठ-साहूकार बड़ा आदमी नहीं है, जो समाज की नाड़ी देखकर उसके रोग की जड़ को प्रकट कर दे। समाज के प्रभावशाली

और प्रतिष्ठित पुरुष एकांत में, मित्र के तौर पर तो न्याय-संगत, प्रशंसनीय उचित बात कह देते हैं, किंतु यह शर्त लगा देते हैं कि खुले तौर पर पब्लिक में प्रकट होकर ऐसा न कहेंगे, और न करेंगे!" यह है समाज की दुर्बलता।

श्री० जुगमंदरलालजी तो स्वर्ग पधारे, किंतु वह अपनी भावना और अपनी सारी संपत्ति जैन-धर्म के प्रचारार्थ और जैन-समाज के हितार्थ छोड़ गये। अपनी सारी संपत्ति धर्मार्थ छोड़ जाने का जैन-समाज में यह पहला दृष्टांत है, ऐसा महान् दान-वीर जैन-समाज के इतिहास में अब तक नहीं हुआ है, किंतु आशा है कि जो प्रयत्न जैन-धर्म-भूषण ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजी, पंडित जुगलकिशोरजी और विद्यावारिधि चंपतरायजी कर रहे हैं, उसके फल-रूप कोई वास्तविक दानवीर समाज में प्रकट होगा, जो देवेंद्र के सदृश धर्मभक्ति और जाति-प्रेमवश अखंड आंदोलन करके जैन-धर्म का प्रचार और जैन-जाति का उत्थान करेगा और जिसका प्रारंभ जैन-कॉलेज की स्थापना से होगा।

जैन-कॉलेज की स्थापना के वास्ते जो अपील मुंशी बाबूलाल वकील हाईकोर्ट, मुरादाबाद-निवासी ने रचा था और जो डेपुटेशन पार्टी के जलसों में स्थान-स्थान पर सुनाया गया था, उसको यहाँ उल्लिखित कर देना हम उचित ही समझते हैं।

जैन-कॉलेज के लिये अपील

جین کالج کے لئے اپیل

—:*:⊙:*:—

है क़ौम को इल्म की ज़रूरत-ہے قوم کو علم کی ضرورت
है जिस पे मदार-ए-जाह ओ इज़्ज़त-عزت و جاہ مدار پہ جس ہے
हर सनअत ओ हिरफ़त ओ तिजारत-ہر صنعت و حرفت و تجارت
हर अम्नओ अमानओ ऐशओइशरत-ہر امن وآمان و عیش وعشرت
है इल्म के साथ फ़ी ज़माना-ہے علم کے ساتھہ فی زمانہ
है इल्म का सारा कारख़ाना-ہے علم کا سارا کارخانہ
मज़हब का क़रार इल्म से है-مذہب کا قرار علم سے ہے
दुनिया का विक़ार इल्म से है-دنیا کا وقار علم سے ہے
है इल्म क़याम-ए-ज़िन्दगानी-ہے علم قیام زندگانی
है इल्म बक़ाय-ए-जावदानी-ہے علم بقاء جاودانی
यह काशिफ़-ए-दौलत-ए-निहाँ है-یہ کاشف دولت نہاں ہے
यह राज़-ए-तरक़्क़ी-ए- जहाँ है-یہ راز ترقی جہاں ہے
सैक़ल है यह क़ुदरती क़ुआ की-صیقل ہے یہ قدرتی قوا کی
कुंजी है हुसूल-ए-मुद्दआ की-کنجی ہے حصول مدعا کی
इस कोह का है वसीअ दामाँ-اِس کوہ کا ہے وسیع داماں
इस दश्त का है फ़राख़ मैदाँ-اس دشت کا ہے فراخ میداں
मज़्हब के उलूम का पढ़ाना-مذہب کے علوم کا پڑھانا
इख़्लाक़-ए-मोआशरत सिखाना-اخلاق معاشرت سکھانا

तालीम उलूम-ए-मग़रबी की - تعلیم علوم مغربی کی
तहसील नई फ़िलासफ़ी की - تحصیل نئی فلاسفی کی
है जिस्म जो यह, तो जान है वह - ہے جسم جو یہ تو جان ہے وہ
है गर यह नमक, तो नान है वह - ہے گر یہ نمک تو نان ہے وہ
गर शीर है यह तो वह शकर है - گر شیر ہے یہ تو وہ شکر ہے
गर शाख़ है यह तो वह समर है - گر شاخ ہے یہ تو وہ ثمر ہے
किश्ती है यह और वह नाख़ुदा है - کشتی ہے یہ اور وہ ناخدا ہے
परहेज़ है यह तो वह दवा है - پرہیز ہے یہ تو وہ دوا ہے
है सिलसिले-ए-लज़ूम बाहम - ہے سلسلہ لزوم باہم
और रब्त-ए-हमदिगर है मोहकम - اور ربط ہمدگر ہے محکم
अजज़ाय दवा - ए - दर्द दोनों - اجزائے دوائے درد دونوں
तासीर में अपनी फ़र्द दोनों - تاثیر میں اپنی فرد دونوں
है लायक़-ए-ज़िक्र हालत-ए- क़ौम - ہے لایق ذکر حالت قوم
है क़ाबिल-ए-फ़िक्र हालत-ए-क़ौम - ہے قابل فکر حالت قوم
भूले हैं जो दर्स-ए-दुनयवी को - بھولے ہیں جو درس دنیوی کو
छोड़ा है जो इल्म-ए-मज़हबी को - چھوڑا ہے جو علم مذہبی کو
बेकार दिमाग़ हो गया है - بیکار دماغ ہوگیا ہے
गुल दिल का चिराग़ हो गया है - گل دل کا چراغ ہوگیا ہے
यानी ईमान-ओ-अक़्ल-ओ-दौलत - یعنی ایمان و عقل و دولت
है सब पे ज़वाल ओ मुसीबत - ہے سب پہ زوال و مصیبت
तदबीर अमल में जल्द लाओ - تدبیر عمل میں جلد لاؤ
फ़ौरन इसे कुछ दवा पिलाओ - فوراً اسے کچھ دوا پلاؤ

हो जायगा मर्ज़ ला दवा फिर-ھوجائیگا مرض لا دوا پھر
होगी न इसे कभी शिफ़ा फिर-ھوگی نہ اِسے کبھی شفا پھر
है सारे दुखों का एक मोआलिज-ھےسارے دکھوں کاایک معالج
खोलो अगर एक जैन-कालिज-کھولو اگر ایک جین کالج
देखा नहीं इससे बढ़ के चारा-دیکھا نہین اِس سے بڑھکے چارا
गो सारा जहान ढूँढ मारा-گو سارا جہان ڈھونڈہ مارا
इल्म ओ अमल ओ फ़राख़ दस्ती-علم و عمل و فراخ دستی
ईमान ओ अमान ओ तंदुरुस्ती-ایمان و آمان و تندرستی
इस एक शजर के सब समर हैं-اِس ایک شجر کے سب ثمرھین
इस एक दवा के सब असर हैं-اس ایک دوا کے سب اثرھین
मशहूर थीं बख़्शिशें तुम्हारी-مشھورتھیں بخششیں تمھاری
था चश्म-ए-फ़ैज़ तुमसे जारी-تھا چشم فیض تم سے جاری
था आम तुम्हारे दान का शोर-تھا عام تمھارے دان کا شور
इनसान से ता ब माही ओ मोर-اِنسان سے تا بہ ماھی و مور
वह क़ौम कि जिसके मंदिरों में-وہ قوم کہ جس کے مندرون مین
जिसके मेलों में तीर्थों में-جس کے میلون مین تیرتھون مین
हर जा है जलाल व जाह ओ अज़मत-ھر جا ھے جلال و جاہ و عزمت
पैदा है कमाल ओ शान ओ शौकत-پیدا ھے کمال و شان و شوکت
वह क़ौम जो दान में है मशहूर-وہ قوم جو دان میں ھے مشھور
वह क़ौम जो है दया से भरपूर-وہ قوم جو ھے دیا سے بھرپور
उस क़ौम को है यह बायस ए नंग-اس قوم کو ھے یہ باعث ننگ
कालिज के लिये हो ऐसी दिल तंग-کالج کے لئیے ھو ایسی دل تنگ

तालीम से इस क़दर तग़ाफ़ुल-تعلیم سے اس قدر تغافل
विद्या का चिराग़ इस तरह गुल-ودیا کا چراغ اس طرح گل
कालिज से हो इतने बेख़बर क्यों-کالج سے ہو اِتنے بے خبر کیوں
फ़र्याद है इसकी बे असर क्यों-فریاد ہے اِس کی بے اثر کیوں
यह नख़्ल तुम्हारी आरज़ू का-یہ نخل تمہاری ارزو کا
बे बर्ग पड़ा हुआ है सूखा-بے برگ پڑا ہوا ہے سوکھا
क़ायम है अगर यही तरीक़ा-قایم ہے اگر یہی طریقہ
मकतब है यही यही है मुल्ला-مکتب ہے یہی یہی ہے ملا
तहज़ीब से ख़ाली अक़्ल से दूर-تہذیب سے خالی عقل سے دور
हो जाओगे वहशियों में मशहूर-ہوجاؤگے وحشیون میں مشہور
मंज़ूर है गर सलाह ए क़ौमी-منظور ہے گر صلاح قومی
मतलूब है गर फ़लाह ए क़ौमी-مطلوب ہے گر فلاح قومی
तालीम का सिलसिला चलाओ-تعلیم کا سلسلہ چلاؤ
एक क़ौम का मदरसा बनाओ-ایک قوم کا مدرسہ بناؤ
दिलदादा ए नाम ए क़ौम होकर-دلدادہ نام قوم ہوکر
सरगश्ता ए जाम ए क़ौम होकर-سرگشتہ جام قوم ہوکر
उठो जागो क़दम बढ़ाओ-اُٹھو جاگو قدم بڑھاؤ
गिरती हुई क़ौम को उठाओ-گرتی ہوئی قوم کو اُٹھاؤ

जैन-कॉलेज की अत्यंतावश्यकता विशेष करके तो इस लिये थी और है कि उच्च कोटि की लौकिक और धार्मिक शिक्षा का अन्य कोई साधन नहीं है। स्याद्वाद-विद्यालय, मोरेना-विद्यालय, महासभा-विद्यालय और ब्रह्मचर्याश्रम २०-२५ बरस से चल रहे हैं, किंतु आज तक उच्च कोटि की लौकिक और धार्मिक दोनो विद्या में निपुण एक भी विद्वान् नहीं हुआ और न कोई धार्मिक पंडित ही ऐसा इन विद्यालयों से निकला कि जिसने स्वतंत्र खोज करके कोई ग्रंथ जैनधर्म के विशेषतम माहात्म्य को प्रकट करनेवाला लिखा हो, जिससे विदग्ध संसार के हृदय पर जैनधर्म की गहरी और अमिट छाप पड़ जाती। किंतु जैन-कॉलिज की अत्यंतावश्यकता का केवल एक यही कारण नहीं है। कॉलेज विना हमारे सामाजिक और धार्मिक जीवन की सुयोजना अन्य प्रकार नहीं हो सकती। जैन-जाति में शक्ति-संचार और सदाचार-प्रचार, जाति-प्रेम और धर्म-भक्ति का यह अनुपम, अतुल्य और सर्वोत्तम साधन है। मुसलिम-जाति ने जो इतनी संगठन-शक्ति बढ़ा ली है कि लंदन की सरकारी India Council, Viceroy Executive Council, की गवर्नरों की कौंसिल, हाईकोर्ट जजी आदि उच्च पदवियों पर मुसल्मान अवश्य ही नियत किए जाते हैं, और योग्यतमता का अटल सिद्धांत भी इस साम्-

हिक शक्ति के सामने टल गया, उसका निमित्त कारण सर सय्यद अहमद का अलीगढ़-कॉलेज है। आर्यसमाज की उन्नति और प्रचार का मूल दयानंद-कॉलेज, लाहौर है। और जब से खालसा-कॉलेज, अमृतसर क़ायम हुआ है, सिक्ख-जाति अत्यंत न्यूनसंख्यक होते हुए भी अपना व्यक्तित्व भारत-शासन पर जमा रही है। और तो और, कान्यकुब्ज और सनातनधर्म-कॉलेज भी खुल गए हैं, परंतु भूली-भटकी जैन जाति अभी तक मेले-तमाशों ही में अपना रुपया व्यय करके अपने को कृतकृत्य समझ रही है। देखिए, इस भ्रम-जाल से इस अभागी जाति को कब मुक्ति मिलती है।

८.

श्रीजैन-वीर बाला-विश्राम

जब देवेंद्र जैन-सिद्धांतभवन, आरा का काम करते थे, उसी के साथ-साथ कन्या-पाठशाला को भी जो श्रीशांतिनाथ जिनालय में स्थापित थी, देख-भाल रखते और समस्त प्रबंध करते रहते थे। इसी पाठशाला को बढ़ाकर महिला महाविद्यालय कर देना देवेंद्र का अभीष्ट था, और इस विषय में कई दफ़ा उन्होंने मुझसे वार्तालाप की है। खेद है कि देवेंद्र का अभीष्ट तो नहीं पूरा हो सका, किंतु उसका संकुचित रूप श्रीजैनबालाविश्राम है, जो आरा-नगर से बाहर ३ मील पर धनुपुरा में स्थापित है। इसको श्रीयुत धर्मकुमारजी की पवित्र स्मृति में धर्मकुंज कहते हैं। श्रीयुत धर्मकुमारजी, दानवीर बाबू देवकुमारजी के लघु भ्राता थे, और युवावस्था में देवलोक पधारे। महिला-संसार के गौरव की मूर्ति, जैन-महिलारत्न, भारतीय स्त्री-समाज की सच्ची सेविका, सदा परोपकार में दत्तचित्ता, सती, साध्वी, श्रीमती पंडिता चंदाबाईजी इन्हीं

बाबू धर्मकुमारजी की धर्मपत्नी हैं, जिनका जीवन जैन-संसार के लिये आदर्श रूप है। श्रीमती चंदाबाईजी के साथ-साथ उनकी सहोदरा श्रीमती पंडिता ब्रजबालादेवीजी ने भी अपना जीवन जैन-महिला-समाज के हितार्थ अर्पण कर दिया है। यह दोनो महिला-रत्न श्रीमान माननीय बाबू नारायणदासजी की सुपुत्री हैं, जो संयुक्तप्रांतीय धारा-सभा के सदस्य रहकर उस पद को तिलांजलि दे चुके हैं, और अब वृंदावन के प्रेम-महाविद्यालय की सेवा में दत्तचित्त हैं। आपने अपनी पुत्रियों को पुत्र के समान शिक्षा दी है, दोनो महिलायें अँगरेजी और संस्कृत में लिख-पढ़ सकती हैं।

ये दोनो सहोदरा इस पवित्र स्थान में रहकर आश्रमवासी महिलाओं को शारीरिक, मानसिक, नैतिक और धार्मिक उन्नति के अर्थ अथक परिश्रम तन-मन-धन से करती रहती हैं; और इनके प्रोत्साहन और प्रयत्न से श्रीमती पंडिता सितारा-सुंदर देवी आदि अन्य महिला आश्रम की सेवा में लगी रहती हैं।

यह आश्रम एक उद्यान में है, जिसके चारो तरफ़ खुली ज़मीन और स्वच्छ वायु है, और उचित स्थानों पर विशाल, हवादार, सुसज्जित शिक्षा-भवन, चित्ताकर्षक चैत्यालय, सुखप्रद छात्रालय आदि बने हैं।

खुली हुई छत पर, चारो तरफ़ से, हवा और रोशनी के

संचार-संयुक्त इस जिनालय में महिला-मंडली प्रतिदिवस शुद्ध स्पष्ट पाठ से प्रक्षाल, पूजन, विसर्जन, आरती, शास्त्र-स्वाध्याय, सामयिक आदि करती हैं। यह दृश्य पुरुषों के लिये भी शिक्षाप्रद होता है।

छात्राओं के घूमने, फिरने, खेलने, व्यायाम करने के वास्ते पर्याप्त प्रबंध है, शोभनीय वृक्ष, पुष्प-वाटिका, घास की कियारियाँ, मीठे-ठंडे जल का गहरा कुआँ सब कुछ है, यहाँ का प्रबंध सराहनीय है। ऐसी लाभप्रद संस्था का होना समाज के शुभ भाग्योदय का सूचक चिह्न है।

देवेन्द्र चरित

६.

जैन-धर्म की प्रभावना

I certainly am one for purity of hearth and home, and the necessity of education, self-sacrifice, larger and liberal views of religion; and last, but not least, a genuine regard for and interest in Jainism do I cherish.

No one has a right to say to me "Thus far thou shalt go and no further."

Devendra Diary 14-1-11.

"मेरा निस्संदेह यह मत है कि गृह पवित्र हों, शिक्षा, आत्मोत्सर्ग, धर्म के संबंध में उदार और असंकुचित विचार की आवश्यकता है, और जैन-धर्म में मेरी श्रद्धा और भक्ति सच्ची है। यह किसी को अधिकार नहीं है कि मुझसे कहे कि बस इस सीमा तक तू चल, और आगे नहीं।"

देवेंद्र दैनिक डायरी १४.१.१९११

जैन-धर्म प्रभावना देवेंद्र का दिन का विचार और रात्रि का स्वप्न था। जैन-धर्म सार्वधर्म होकर दिगंतव्यापी हो, मानव-संसार के हृदय मे संचार करे, घट-घट में स्थान पावे और जगत् का उद्धार करे, यह मनोकामना सदैव देवेंद्र के मन में बसा करती थी।

देवेंद्र का सर्वोपरि ध्येय था कि जैन-धर्म का सौंदर्य, उसकी महिमा, उसका प्रभाव, उसका दुख-निवारक, शांतिप्रसारक, सुख-संपत्तिदायक और मोक्षविधायक होना प्रत्येक मानव-हृदय में अंकित हो जावे और इसी प्रयत्न में वह निरंतर लगे रहते थे। ५ जून १९११ की डायरी में देवेंद्र ने हिंदी में लिखा है—

"बड़े भाग्य-वश आज दिवस ब्रह्मचारीजी का आहार मेरे घर हुआ, मैंने आपकी सम्मति से ४ अणु व्रत लिया, स्वस्त्री संतोष का व्रत लिया, मैं श्रीपरमात्मा से यही चाहता और प्रार्थना करता हूँ कि व्रत पूर्ण रूप से पालन करने की शक्ति मुझे प्रदान करे। शीतलप्रसादजी के साथ बाँकीपुर गये Mr. Jaini से मिलने को, शाम को वापस आ गए।"

इनके दृढ़ चरित्र और धर्म-भक्त होने का यह एक छोटा-सा प्रमाण है—

२९.२.१२ को लिखा है—"How noble to give and

give, and give everything, life, health......for the upliftment of Dharma." "धर्म प्रभावना के अर्थ स्वास्थ्य, जीवन, सब कुछ देना, देना, देना कितनी बड़ी बात है।"

"७ मार्च १९१२ को बनारस से चले, ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजी के साथ लखनऊ, कानपुर, मुरादाबाद, चँदौसी होते हुए अहिच्छत्र के उत्सव में सम्मिलित हुए, और प्राचीन सिक्के एकत्रित किए और ३ दिन ठहरकर मेरठ होते हुए श्रीऋषभ ब्रह्मचर्याश्रम हस्तिनापुर पहुँचे।" १६ मार्च को युनिवर्सिटी का इम्तहान इंटरमीडियेट का प्रारंभ होता था और देवेंद्र ने अपनी डायरी में लिखा है "Whole day enjoying the best of things, religious, social, spiritual, intellectual, moral, and what not in company of Brahmachari Bhagwandinji, Gendanlalji with the infant Brahmacharis." "सारे दिन उत्तमोत्तम धार्मिक, सामाजिक, आध्यात्मिक, मानसिक, नैतिक, सब प्रकार के आनंद में ब्रह्मचारी भगवानदीनजी, गेंदनलालजी और बालब्रह्मचारियों के साथ मग्न रहा।"

देवेन्द्र भारत जैन-महामंडल के बिहार-प्रान्त के मंत्री थे, और सं० १९१५ ई० में बम्बई के अधिवेशन में इसी अधिकार से सम्मिलित हुए थे। यह अधिवेशन महामंडल का

डॉक्टर टी० के० शाह बैरिस्टर के सभापतित्व में बड़े समारोह के साथ हुआ था। इसकी सफलता के श्रेय में भी देवेन्द्र का भाग था। रातों जाग जागकर प्रस्ताव तय्यार करने और कार्यवाही लिखने का काम किया था।

शिमला के वेदी प्रतिष्ठा और रथोत्सव को जो अनुपम सफलता प्राप्त हुई, वह देवेन्द्र के ही परिश्रम का प्रभाव था। देवेन्द्र धर्म प्रभावना के कार्य में सदैव अन्य सब कार्यों को छोड़कर सम्मिलित होते, और सैकड़ों रुपए की धर्म-पुस्तकें प्रचारार्थ बाँट देते थे।

अमृतसर में जिन-मंदिर बनाने का प्रयत्न उन्होंने किया, और उनकी हार्दिक वांछा थी कि लंदन में एक जैन-मन्दिर बने, और लंदन को सड़कों पर रथोत्सव हो, बच्चे-बच्चे के हाथ में जैन-पुस्तक और मुँह पर जिन-स्तुति हो।

सा जिह्वा या जिनं स्तौति तच्चित्तं यज्जिने रतम्,
तावेव केवलौ श्लाघ्यौ यौ तत्पूजाकरौ करौ।

१०

सरस्वती-सेवा

प्रथम पुस्तक जो देवेन्द्र ने प्रकाशित की, वह श्रीमती जानकी-बाईजी की जीवनी थी। जानकीबाईजी आरा-कन्या-पाठशाला की अध्यापिका और इसकी संस्थापिका और संचालिका श्रीमती पंडिता चंदाबाईजी की सहकारिणी थीं। कन्याशाला की उन्नति की देवेन्द्र को अहर्निश चिन्ता लगी रहती थी, आरा में रहते हुए तो वह नित्य प्रतिदिन पाठशाला का काम करते ही रहते थे, किंतु बाहर होते हुए भी वह इस पाठशाला का सदैव ध्यान रखते थे।

३ मार्च १९११ की डायरी में लिखा है—

A letter from Arrah pierced deep in my heart; it was from Chandabai telling me of Baijee being attacked by plague. I wired. This did not comfort me. I hastened to Arrah by night train; reached there at 3 o'clock, set out to see Baijee in the dark gloomy night,

found her in a sinking condition; she could recognise me; had a very little talk.

"आरा का एक पत्र मेरे हृदय में छुरी की भाँति चुभ गया ; वह श्रीमती चंदाबाईजी का था, और बाईजी (जानकीबाई) पर प्लेग के आक्रमण का सूचक था, मैंने तार दिया ; इससे संतोष नहीं हुआ ; मैं शीघ्र ही रात को रेल से आरा गया ; तीन बजे पहुँचा ; काली अँधेरी रात में ही बाईजी के पास गया ; वह डूबती हुई दशा में थीं ; मुझे पहचान लिया; किंचित् बात की ।"

४ मार्च को डायरी में लिखा है—

"......Had a long talk with Maharaj Nemi Sagarjee about the Syadvad, and Kanya Patshala......Once more went to see Baijee in the garden-bungalow, met her, but she was not quite in her senses this time."

"महाराज नेमी सागरजी से स्याद्वाद और कन्या-पाठशाला के विषय में देर तक बात होती रही···। एक दफ़ा फिर बगीचे के बँगले में बाईजी को देखने गया ; उनको देखा ; किंतु इस समय वह ठीक होश में नहीं थीं ।"

६ मार्च १९११ को डायरी में लिखा है—

"All of a sudden was pierced with the death news of Shrimati Janki-Baijee of sacrde

memory. Sent her death news to almost all the leading Hindi Journals for publication." "सहसा पवित्र स्मरणीय श्रीमती जानकीबाईजी का हृदय-विदारक मृत्यु-समाचार मिला, यह खबर समस्त हिंदी-समाचारपत्रों को प्रकाशित करने के लिये भेज दी।"

सितम्बर १९११ में श्रीमती जानकीबाईजी की पवित्र जीवनी प्रकाशित हुई, और उसी साल में "ऐतिहासिक स्त्रियाँ" भी प्रकाश में आकर समाज के सामने पधारीं।

"सेवा-धर्म" अनुपम उपदेशों से भरपूर, और मनुष्य को मनुष्यत्व प्रदान करनेवाली शिक्षा से पूर्ण, देवेन्द्र ने अनुवाद करके प्रकाशित की और फिर तो पुस्तक-पर-पुस्तक बराबर निकलती ही रहीं।

१९११ के अंतिम दिवस में वंगीय सार्वधर्म-परिषद् की स्थापना करके, "सार्वधर्म", "जैन-धर्म", "जैन-तत्त्व-ज्ञान", "जिनेन्द्र-मत-दर्पण" आदि पुस्तकें बंगभाषा में देवेन्द्र प्रकाशित करते रहे।

१९१४ में "जैनियों की पवित्र पुस्तकावली" "Sacred Books of the Jainas" का प्रारंभ हुआ, और श्रीयुत शरचंद्र घोषाल द्वारा संपादित होकर "द्रव्य-संग्रह" छपने लगा, जो तीन वर्ष के असीम परिश्रम से १९१७ में तैयार हुआ।

१९१५ में देवेन्द्र के अपूर्व प्रकाशन-प्रेम पर मुग्ध होकर श्रीयुत चंपतराय जैन (विद्यावारिधि) ने अपनी बृहद् पुस्तक "ज्ञान की कुंजी" Key of Knowledge छपाने का भार देवेन्द्र को सौंपा। श्रीयुत जुगमंदरलाल जैनी ने तो अपनी सब पुस्तकों का प्रकाशक देवेन्द्र को बना ही दिया था।

विद्यावारिधि श्रीयुत चंपतराय जैन, बैरिस्टर, अपने पत्र ३०-१-१४ में लिखते हैं—

With your lofty ideals and noble sentiments, I am sure you would make an excellent author if you would only try your hand at it. There is so much originality in you that I have felt astonished at your letters, and surprised at the fact that you have not yet come out with an orignal work in English on Jainism or some other subject. Our community has been justly noted for precision of thought, and it is men like you who will and should maintain that reputation. Do write something please, and I am sure you will do it exceedingly well.

I have gone through your last note twice. It is simply grand, both in thought and expression. Yes, if one could only break away from this dark temptress, the world of men and their fair daughters, what could he not attain to.

"आपके उच्च उद्देश्य और प्रशस्त विचारों से मुझे दृढ़ प्रतीत होता है कि आप उत्तम संपादक हो जायँगे। यदि आप उस तरफ़ प्रयत्न करेंगे, आप अपूर्व कल्पना-शक्ति के पात्र हैं, आपके पत्रों ने मुझे विस्मय में डाल दिया है और यह आश्चर्य है कि आपने जैन-धर्म अथवा अन्य विषय पर अँगरेज़ी भाषा में आत्मरचित कोई स्वतंत्र ग्रंथ अब तक क्यों नहीं प्रकाशित किया। हमारा समाज उचित रीति से विचार के सुनिश्चय के लिये प्रसिद्ध है, और आप-सरीखे पुरुष ही इस प्रसिद्धि को स्थिर रख सकते हैं। कृपया कुछ तो अवश्य लिखिए ; मुझे पूर्ण विश्वास है कि आप भली प्रकार सफल होंगे। मैंने आपके पिछले लेख को दो बार पढ़ा, उसके विचार और भाषा अति उत्तम हैं, हाँ, यदि मनुष्य इस संसार के नर-नारी रूप प्रलोभन को तोड़ डाले, तो क्या कुछ नहीं प्राप्त कर सकता।"

७-२-१४ के पत्र में आपने लिखा है—

My love for Jainism has reached the highest point.

Where Vedant is inexact, Jainism is dead certain and precise. Jaina Moksha is decidedly superior to that of Vedanta. No wonder there are only 1½ millions of Jains in the world. It is too precise a religion to be the religion of the masses. And yet it is simple enough.

जैनधर्म से मेरा प्रेम उच्चतम सीमा को पहुँच गया है, जहाँ वेदांत अस्पष्ट है, जैन-धर्म सर्वतः स्पष्ट और यथार्थ है—जैन मोक्ष वेदांत मुक्ति से निश्चयतः उत्तमतर है। आश्चर्य ही क्या है कि संसार में केवल १५ लाख जैन हैं। यह धर्म ऐसा यथार्थ और निश्चित है कि सामान्य जनता का धर्म नहीं हो सकता, और फिर भी इसका सिद्धांत नितांत सरल है।

२०-२-१४ के पत्र में आपने लिखा है—

You have been so good to me that I hardly know how to thank you even for the great and sincere interest which you have taken in me.

You can always rely upon my services, to the extent I am capable of, in the cause of our noble religion.

"जो कृपा आपने मुझ पर की है और जो गहरा और सच्चा अनुराग आपने मेरे लिये दरशाया है, उसका धन्यवाद मैं नहीं जानता कि क्योंकर करूँ; हमारे सर्वोत्तम धर्म के संबंध में जिस हद तक मेरी योग्यता है, आप मुझसे सेवा लेने में पूर्ण विश्वास रखिए।"

तीन बरस बाद १७।२।१७ के पत्र में वह लिखते हैं—

"The little book Tribeni shows what a wonderful treasury of Knowledge your mind is, but I do not like the subject selected

(with apologies)......Jainism must illumine and lit up dark corners of others, rather than be an occasion in the eyes of others for spreading the mystic cult.

Such a versatile, fertile, energetic and productive genius as yours must be turned to sober study and scientific thought, which will come natural to it very soon.

"छोटी-सी पुस्तक त्रिवेणी से विदित होता है कि तुम्हारा मन कैसा अद्भुत ज्ञान-भंडार है, किंतु क्षमा कीजिए, मैं पुस्तक के विषय को पसंद नहीं करता। जैन-धर्म दूसरों के अंधकार-मय प्रदेशों को समुज्ज्वलित करनेवाला है, किसी के मन में यह भ्रम न होना चाहिए कि वह किसी गुप्त मत का प्रचारक है। आपकी जैसी बहुरूपिणी, उर्वरा, तीक्ष्ण और फलप्रदा बुद्धि सौम्य और वैज्ञानिक अध्ययन में नियुक्त होनी चाहिए, जो गुण स्वभाव से ही उसमें सत्वर उत्पन्न होते रहेंगे।"

विलायत जाते समय २१।३।१६१३ को बैरिस्टर जुगमंदर-लालजी ने लिखा था "You will pass your Cambridge Examination through my help soon, and then go thunderingly through the Bar. Why can't you come with Principal Arundale ? Where there is a will, there is a way! Thank and pray

to our beloved master Lord Mahavira !! Great be his name !!! Our religion is sure to rise much by your presence in London with me."

"तुम मेरी सहायता से कैंब्रिज की परीक्षा शीघ्र पास कर लोगे, और फिर विद्युद्वेग से बैरिस्टरी से निकल जाओगे। क्या तुम प्रिंसिपल अरंडेल के साथ नहीं आ सकते ? जब इच्छा होती है, तो मार्ग मिल ही जाता है। प्यारे प्राणेश्वर महावीर स्वामी से प्रार्थना करो !! उनका नाम महान् है !!! लंदन में यदि तुम मेरे साथ होगे, तो हमारे धर्म की प्रभावना की अत्यंत संभावना है।"

२४ एप्रिल १९१७ को एक महाशय ने उनको लिखा था "प्यारे पवित्रात्मा, तुम्हारा प्रेम ही परमानंद का हेतु है, तुम्हारी स्मृति ही जीवन का मूल है, तुम्हारा प्रेम-प्रसाद ही प्राण का आधार है, सत्यासत्य का साक्षी प्रेमदेव है।"

११ । १ । २१ को एक मित्र ने लिखा है—

" I am so grateful to you for your so kindly re-writing all my scribblings. You have spent so much time labour and attention on it that I hardly feel justified in calling the book mine."

"आपने जो मेरी घसीट को फिर से लिखा, एतदर्थ मैं आपका अत्यंत कृतज्ञ हूँ, आपने इस पुस्तक पर इतना समय,

परिश्रम और ध्यान लगाया है कि मुझे यह कहने का औचित्य नहीं रहा कि पुस्तक मेरी है।"

२२-२-१४ को श्रीयुत मोतीलाल जैन ने आगरा से लिखा था—

The more I know of you, the more I am stirred to action. Your living example is in itself sufficient to arouse the community from its slumber. May Success crown your efforts.

मुझे जितना अधिक परिचय आपका होता जाता है, उतना ही अधिक मेरा उत्साह कार्य करने का बढ़ता जाता है। आपका जीवित दृष्टांत समाज को निद्रा से जाग्रत् करने के अर्थ स्वतः पर्याप्त है, प्रार्थना है कि आपका प्रयत्न सफल हो।

Babu Daya Chand Goeliya, B. A. ने एक पत्र (बिना तारीख़) में लिखा है—

I have no words to express my appreciation of the noble work you are doing. Alas ! Jainism has been thrown in the back-ground. Nobody cares to bring it to the platform of Religion. A few shopkeepers have become the sole masters of it. They have degenerated it. It is pining and dying. Save and rescue."

जो उत्तम कार्य आप कर रहे हो, उसको सराहना करने के लिये मेरे पास शब्द नहीं हैं, खेद है कि जैन-धर्म को पीछे फेंक दिया गया है, उसको धर्मों के चबूतरे पर लाने की किसी को भी फिक्र नहीं है, कुछ दूकानदार उसके अकेले मालिक बन बैठे हैं, उन्होंने उसको गिरा दिया है, वह कराह रहा है और मर रहा है, उसको बचाओ, उसकी रक्षा करो।

पुस्तक-प्रकाशन और विशेषकर जैन-धर्म के ग्रंथों को उत्तम प्रकार टीका, चित्र आदि से सुसज्जित करके प्रकाशित करना देवेंद्र का व्यसन था। एक दफ़ा इलाहाबाद के *Liddels' Printing Press* को खरीदने की लिखा-पढ़ी तक की, किंतु मामला रह गया।

इसी पुस्तक-प्रकाशन-प्रेम में देवेंद्र कलकत्ते गये थे कि सहसा काल विकराल ने कवलित कर लिया।



हिंदी पुस्तकों की सूची जो प्रेम-मंदिर, आरा से देवेंद्र द्वारा प्रकाशित हुईं

प्रेमकली
प्रेमपुष्पांजली
प्रेमपथिक
प्रेमांजली
प्रेमपरीसह
प्रेमशतक
प्रेमधर्म
सेवाधर्म
मैत्रीधर्म
शांतिधर्म
शांतिमहिमा
बालिका-विनय
ऐतिहासिक स्त्रियाँ
त्रिवेणी
भावना-लहरी
फिर निराश क्यों
कैसा अंधेर

उपदेश-रत्नमाला
सौभाग्य रत्नमाला
मोहिनी
मेरी भावना
तरंगिणी
नवरस
हित शिक्षा
सच्चा विश्वास
महिलाओं का चक्रवर्तित्व

विश्वदर्शक चार्ट
विश्वतत्त्व ,,
सार्वधर्म ,,
चौबीस तीर्थंकरमान ,,
जीवसमास ,,
गुण-स्थान-कर्म-प्रकृति,,

A List of English books published by Kumar Devendra Prasad Jain, Prem Mandir Arrah.

THE SACRED BOOKS OF THE JAINAS SERIES.

Vol. I Dravya Samgraha.

Vol. II Panchastikaya.

Vol. III Tattwarthadhigama Sutra.

OTHER BOOKS.

Parmatma Prakasha

The Key of Knowledge, I & II Edn.

The Householder's Dharma.

The Practical Path.

The Science of Thought.

A peep behind the Veil of Karma.

Jainism-Second edition.

Jainism not Atheism.

Jaina Law.

Nayavatara.

Naya Karnika.

Dictionary of Jain Biography.

Pure Thoughts. Second Edition.

Jaina Gem Dictionary.

What is Jainism, Third Edition.

Samayika.

Immortality and Joy.

Husn-i-Avval in Urdu.

Jain Motto Cards.

PICTURES IN COLOURS.*

Sita under ordeal of fire.

Sita after the ordeal.

The 16 dreams of Emperor Chandra Gupta.

The16 dreams of the Tirthankara's mother.

The Court (Samavasarana) of the Tirthankaras.

Panch Parmeshthi.

The infatuated soul.



देवेन्द्र चरित

११.

स्वर्गारोहण

मार्च १९२१ में कुछ पुस्तकों के छपवाने के प्रबंधार्थ देवेन्द्र कलकत्ते गए। वहाँ प्रेस के झंझट के कारण अधिक ठहरना पड़ा। सहसा शीतला रोग ने आ दबाया। श्रीमान् बाबू छोटे-लालजी ने, जिनके यहाँ वह ठहरे हुए थे, चिकित्सा और परि-चर्या में तन-मन-धन से पूर्ण प्रयत्न किया। किंतु काल विक-राल के आगे कुछ न चली, और रविवार, फाल्गुन-शुक्ल १०, सं० १९७७, अर्थात् १७ मार्च, १९२१ को वृद्धा माता, १५ वर्ष की अर्द्धांगिनी, कुटुंबी जनों और सैकड़ों मित्रों को बिलखता छोड़, अपने मित्रगण और प्रेमियों से सैकड़ों कोस दूर, अत्यंत शारीरिक वेदना समता भाव से सहकर, जैन-जाति के उद्धार और जैन-धर्म के प्रचार का ध्यान करते हुए देवेन्द्र सुरलोक में सुरेन्द्र हो गए।

प्रेमकली में जो लिखा था, वह वचन सच हो गया—

हम मानेंगे तुम्हें, हमें मानो, मत मानो ;
हम वारेंगे प्राण तुम्हीं पर, सचमुच जानो।

कुमार देवेंद्रप्रसाद जैन के जीवन की घटनाओं का काल-क्रमानुसार संक्षिप्त विवरण

१८८८, ऑक्टोबर २७...जन्म

१९०५, एप्रिल १२...श्री स्याद्वाद-महाविद्यालय की स्थापना

१९०७, जुलाई...श्री बाबू देवकुमारजी का स्वर्गवास

१९०८, जुलाई...सेंट्रल हिंदू-कॉलेज बनारस में प्रवेश

१९०९, मई २५...श्री जैनेंद्रकिशोर का स्वर्गवास

१९११, जून ३...श्री जैन-सिद्धांत-भवन आरा की स्थापना

१९११, जून ५...अणुव्रत ग्रहण

१९११, दिसम्बर ३१...बंगीय सार्वधर्म-परिषद् की स्थापना

१९१३, ...शिमला जैन-मंदिर की स्थापना

१९१३, दिसम्बर ...श्री स्याद्वाद-महोत्सव-सप्ताह काशी

१९१४, जुलाई ...श्री दानवीर सेठ माणिकचंद J. P. का स्वर्गवास

१९१५, नवम्बर ...कलकत्ते में श्री जैन-सिद्धांत-भवन की प्रदर्शिनी

१९१६, नवम्बर २२...श्री बाबू फिरोझोचंद का स्वर्गवास

१९२१, मार्च १७...स्वर्गारोहण